स्वस्थ चेतना का वाहक

सहयोग राशि
40/-₹

नवम्बर 2026

क्रान्ति

मासिक

बच्चे हमारा भविष्यबच्चे हमारा भविष्य

- बच्चे का स्वभाव और उसपर माहौल का असर
- शादी और ज़िम्मेदारी से दूर भागते युवा
- इस्लाम में बच्चों की तरबियत



WITH BEST COMPLIMENTS FROM

Sermad Traders

Agriculture Input Dealer

B.H. Road, Tarikere, Chikkamagalore District



"मज़दूर की मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पहले अदा कर दो।"

(हदीस : इब्ने माजा)

प्रधान संपादक
डॉ. फ़रहत हुसैन

प्रबंधक
नईम ख़ान
+91 9891160829

सहयोग राशि
एक प्रति 40/- रु॰ एक वर्ष 450/- रु॰
पांच वर्ष 2000/- रु॰ आजीवन रु॰ 6000/
सऊदी अरब और खाड़ी के देशों के लिए 150/- रियाल
यूरोप व अमेरिका के लिए 50/- US डॉलर

अदाएगी के बाद स्क्रीनशॉट हेल्पलाइन न॰ **9818799223** पर अवश्य भेजें।

Name: KANTI
Pay Directly to: kanti8920589292@indianbk

Account Detail
NAME : KANTI
A/C NO : 0990839195
IFS CODE : IDIB000J029
TYPE : CURRENT
BANK : INDIAN BANK
BRANCH : JAMIA MILLIA ISLAMIA
NEW DELHI - 110025

चेक / ड्राफ़्ट 'कान्ति' के नाम से बनवाएं

ख़रीदार बनने, एजेंसी लेने, प्रचार-प्रसार एवं प्रबंधकीय मामलों के लिए सम्पर्क करें :

कार्यालय :
कान्ति मासिक, डी-314, दावत नगर,
अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर,
ओखला, नई दिल्ली-110025

प्रकाशक मुहम्मद अहमद द्वारा दावत ट्रस्ट (रजि॰), डी-314 दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर, नई दिल्ली-110025 से प्रकाशित एवं

Printer : Akhilesh Singh
Press : AARYA PRINTERS
201, Ground Floor, DSIDC Complex
Okhla Industrial Area phase-1,
New Delhi-110020
Editor : Mohammad Ahmad

संस्था की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित है।

विचार सौरभ **डॉ. कौसर यज़दानी नदवी**

बालक बेंजामिन

बेंजामिन फ्रेंकलिन
अमेरिका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक भी थे और राजनेता भी।
बचपन में, फ़िलाडेल्फ़िया नगर के एक स्कूल में पढ़ते थे।
समय पर स्कूल पहुँचना
उनका नित्य प्रति का काम था।
कभी देर न की उन्होंने।
स्कूल के रास्ते में लोहार की एक दुकान थी।
एक दिन बालक बेंजामिन दुकान के पास रुक गया।
लोहार ने बच्चे को देखा तो बोला–
कितने प्यारे बच्चे हो तुम, ज़रा चाक घुमाने में मेरी सहायता तो करो।
वह बच्चे की तारीफ़ करता रहा
और एक-एक करके बहुत सारे काम उससे करा लिए।
नतीजा यह हुआ कि बेंजामिन उस दिन समय पर स्कूल नहीं पहुँच सका।
देर से आने पर स्कूल में पिटाई भी हुई,
एक तो काम कराते-कराते लोहार ने थका डाला
ऊपर से पिटाई भी हुई,
बालक बेंजामिन बीमार पड़ गया।
एक सप्ताह तक वह कष्ट भोगता रहा
बड़े होकर
बेंजामिन ने आत्मकथा लिखी
इस घटना का, सविस्तार उल्लेख किया
और पाठकों को यह संदेश दिया,
मैंने उसी दिन
यह तय कर लिया
कि मैं कभी ख़ुशामद के जाल में नहीं फँसूंगा।
अपने जीवन-लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए
अथक परिश्रम करते हुए आगे बढ़ूँगा,
और यह सब होगा,
ख़ुशामद के जाल में फँसे बिना
इसलिए कि ख़ुशामद,
राह खोटी करती है,
लक्ष्य तक पहुँचने नहीं देती।

वर्ष 36 अंक 05 नवम्बर 2026





स्वस्थ चेतना का वाहक

कान्ति
मासिक

इस अंक में

➤ बालक बेंजामिन (विचार सौरभ)	– डॉ. कौसर यज़दानी नदवी	3
➤ बच्चे हमारा भविष्य (संपादकीय)	–डॉ. फ़रहत हुसैन	5
➤ मार्गदर्शन	–संपादन प्रभाग	6
➤ इस्लाम : सत्य भी, मानवता की आवश्यकता भी	–एफ़. ए. मुजीब	7
➤ इंसान बनकर करें ईश्वर की तलाश	–सुफ़ियान अहमद	9
➤ बच्चे का स्वभाव और उसपर माहौल का असर	–डॉ. ख़ान मुबश्शरा फ़िरदौस	11
➤ एआई और हमारे बच्चों की शिक्षा	–सुफ़ियान अहमद	15
➤ शादी और ज़िम्मेदारी से दूर भागते युवा, क्या है समाधान?	–अर्शी ख़ानम	17
➤ इस्लाम में बच्चों की तरबियत	–डॉ. मुहम्मद इक़बाल सिद्दीक़ी	21
➤ मैं क्या बनूँ? (साहित्यिकी)	–बिन्ते मुज्तबा मीना	25
➤ लेख लिखेंगे एआई से, राइटर कहलाएँगे (साहित्यिकी)	–सुफ़ियान अहमद	25
➤ विश्व घटनाचक्र	–संपादन प्रभाग	27
➤ जेन ज़ी : सपने बड़े हों, जड़ें गहरी रहें	–अज़का हयात	29
➤ आसान शादी : समाज की ज़रूरत	–मुहम्मद सलमान	31
➤ नौकरी की तलाश में गुज़रता युवा जीवन	–तबस्सुम शेख़, पुसद	35
➤ एकेश्वरवाद : एक व्यावहारिक और तार्किक अध्ययन	–सुफ़ियान अहमद	37
➤ बेटी है अनमोल	–डॉ. फ़रहत हुसैन	39
➤ चूक	–माइल ख़ैराबादी	41
➤ बाइबल में पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) का उल्लेख	–डॉ. वक़ार अनवर	43
➤ युग-परिवर्तनकारी हस्ती के कारनामों का उल्लेख और 'द ग्रेट गैप'	–डॉ. फ़रहत हुसैन	47
➤ हिजरत और मस्जिदे-क़ुबा का निर्माण	–मुशर्रफ़ अली	49

संपादकीय



डॉ. फ़रहत हुसैन

बच्चे हमारा भविष्य

समाज में बच्चों का होना एक वरदान है और उनकी ज़रूरतों को पूरा करना हमारी ज़िम्मेदारी है। यदि आज हम बचपन को सुरक्षित और समृद्ध बनाएंगे, तभी एक सशक्त और ख़ुशहाल राष्ट्र का निर्माण कर सकेंगे। बच्चे ही हमारे समाज का असली आईना हैं, उनके चेहरों की मुस्कान ही हमारी वास्तविक तरक़्क़ी का पैमाना है। बच्चों का महत्व इस बात में भी है कि वे मन के सच्चे होते हैं, नई चीज़ों को जल्दी सीखते हैं, नई आदतों को सबसे तेज़ी से अपनाते हैं। वे न केवल अपने परिवारों को बदलने की क्षमता रखते हैं बल्कि एक ऐसा समाज भी बना सकते हैं जो रूढ़ियों से मुक्त और प्रगतिशील हो। आज पर्यावरण संरक्षण से लेकर स्वास्थ्य और डिजिटल साक्षरता तक में उनकी अभिरुचि देखकर हैरत होती है। विडंबना यह है कि आज बच्चों की चाहत कम होने की प्रवृत्ति भी दिखाई पड़ रही है और कहीं-कहीं दुर्भाग्य से उन्हें बोझ समझा जा रहा है। विश्व में किसी भी स्थान पर बच्चों को बोझ समझने का रुझान पैदा होने का अर्थ होता है कि वह समाज अपने पैर पर स्वयं ही कुल्हाड़ी चला रहा है। शिक्षा, स्वास्थ्य और पालन-पोषण पर होने वाला ख़र्च कोई बोझ नहीं, बल्कि भविष्य के लिए किया गया सबसे महत्वपूर्ण निवेश है।

बेटे और बेटी के बीच भेदभाव की मानसिकता तो इससे भी अधिक चिंताजनक है। इतिहास में ऐसे दौर रहे हैं जब बेटियों के जन्म को अभिशाप माना गया और कुछ समाजों में उन्हें जीवित दफ़्न करने जैसी अमानवीय प्रथाएं तक प्रचलित थीं। इस्लामी परंपरा में भी अरब के जाहिलियत कालीन समाज में बेटियों के प्रति ऐसी क्रूर प्रथा की कठोर निंदा का उल्लेख मिलता है। आज विज्ञान और आधुनिकता के युग में हम उस मानसिकता से आगे निकलने का दावा करते हैं, लेकिन कन्या भ्रूण हत्या जैसी घटनाएं बताती हैं कि समस्या अभी भी मौजूद है। हमें यह भी सोचना होगा कि हम अपने बच्चों के लिए कैसी दुनिया तैयार कर रहे हैं? क्या हम उन्हें ऐसा वातावरण दे रहे हैं जिसमें वे स्वस्थ शरीर, स्वतंत्र विचार, अच्छे संस्कार और मानवीय संवेदनाओं के साथ बड़े हो सकें? बच्चों का पालन-पोषण केवल उन्हें स्कूल भेज देने का नाम नहीं है। असली शिक्षा घर से शुरू होती है, इसलिए बच्चों में ईमानदारी, अनुशासन, दया, सहिष्णुता, ज़िम्मेदारी, सहयोग और दूसरों के प्रति सम्मान जैसे संस्कार विकसित करना हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए। पौष्टिक भोजन, स्वच्छ हवा, पर्याप्त नींद, खेलकूद और सुरक्षित वातावरण उनके स्वस्थ विकास की बुनियाद हैं। आज प्रदूषण, मिलावटी भोजन, स्क्रीन का अत्यधिक इस्तेमाल, शारीरिक निष्क्रियता और बढ़ता मानसिक दबाव बच्चों के बचपन को प्रभावित कर रहे हैं।

मानवीय जीवन के भौतिक पक्ष के साथ ही उसका आध्यात्मिक पक्ष की बहुत महत्वपूर्ण है। हमें नई पीढ़ी को इस सच्चाई को बताना होगा। उन्हें इनसानी ज़िंदगी के क़ीमती होने का एहसास दिलाना होगा तथा जीवन के शाश्वत सत्यों और विश्वासों के बारे में भी मार्गदर्शन करना होगा। हमें इस सवाल पर भी ग़ौर करना होगा कि हम अगली पीढ़ी को विरासत में क्या दे रहे हैं? हवा में बढ़ता प्रदूषण, प्रकृति का क्षरण, समाज में बढ़ती नफ़रत, हिंसा, असहिष्णुता और दुनिया में फैलती नकारात्मकता—इन सबके बीच हमारे बच्चे बड़े हो रहे हैं। हमने उनके लिए तकनीक तो बहुत विकसित कर दी, लेकिन क्या उनके लिए संवेदनशील समाज भी उतनी ही गंभीरता से बनाया है? बच्चों को संस्कारवान बनाने से पहले समाज को सकारात्मक रुख़ देना होगा। उन्हें प्रेम सिखाने से पहले हमें अपने व्यवहार में प्रेम दिखाना होगा। उन्हें पर्यावरण बचाने की शिक्षा देने से पहले हमें स्वयं प्रकृति के प्रति ज़िम्मेदार होना होगा। उन्हें नफ़रत से दूर रखने के लिए हमें अपनी भाषा और अपने आचरण में संयम लाना होगा। उन्हें जवाबदेही सिखाने से पहले हमें समाज तथा ईश्वर के प्रति जवाबदेह होना होगा। आने वाला कल हमारे बच्चों का है—और उस कल की तस्वीर आज हम ही बना रहे हैं। ■■

–संपादन प्रभाग

क़ुरआन



भलाई करते रहिए

जीवन में कई बार ऐसा होता है कि हम किसी अच्छे काम या अच्छी आदत की शुरुआत तो करते हैं, लेकिन कुछ समय बाद थककर उसे छोड़ देते हैं। कभी-कभी हमें यह भी लगता है कि दूसरे लोग भी हमारे साथ वैसा ही अच्छा व्यवहार करें, तभी हम भलाई करें। लेकिन ईश्वर हमसे ऐसी अपेक्षा नहीं करता।

क़ुरआन की 'सूरह अल-बक़रा' की आयत-195 के एक भाग में कहा गया है :

"अल्लाह की राह में ख़र्च करो और अपने हाथों अपने आपको तबाही में न डालो। अच्छे-से-अच्छा तरीक़ा अपनाओ कि अल्लाह अच्छे-से-अच्छा तरीक़ा अपनाने वालों को पसन्द करता है।" (क़ुरआन, 2:195)

यह भी याद रखिए कि जो व्यक्ति हमारे साथ अच्छा व्यवहार करता है, उसके साथ भलाई करना तो हमारा नैतिक कर्तव्य है ही, परन्तु जो हमारे साथ अच्छा व्यवहार न करे, उसके साथ भी भलाई करना, वह उच्च चरित्र है जिसकी शिक्षा क़ुरआन देता है।

'सूरह फ़ुस्सिलत' की आयत-34 में फ़रमाया गया है :

"और ऐ नबी! भलाई और बुराई बराबर नहीं हैं। तुम बुराई को उस भलाई से दूर करो जो बेहतरीन हो। तुम देखोगे कि तुम्हारे साथ जिसकी दुश्मनी हो गई थी, वह जिगरी दोस्त बन गया है।" (क़ुरआन, 41:34)

हदीस

भलाई कोई वैकल्पिक गुण नहीं

"अल्लाह ने हर काम में एहसान (श्रेष्ठता और भलाई) को अनिवार्य किया है।"
(हदीस : मुस्लिम)

इस हदीस में "एहसान" का अर्थ केवल दान या परोपकार नहीं है, बल्कि हर काम को उत्तम ढंग से करना और हर व्यक्ति के साथ भलाई का व्यवहार करना है। इसका दायरा इबादत, परिवार, पड़ोसी, समाज, यहां तक कि पशुओं के साथ व्यवहार तक फैला हुआ है।

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने यह स्पष्ट किया कि भलाई कोई वैकल्पिक गुण नहीं, बल्कि एक ऐसा सिद्धांत है जिसे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनाना चाहिए। इसलिए कि एक इंसान का चरित्र केवल उसकी उपासना से नहीं, बल्कि उसके व्यवहार, उसके आचरण और उसके द्वारा दूसरों के साथ किए गए सद्व्यवहार से पहचाना जाता है।

इस्लाम : सत्य भी, मानवता की आवश्यकता भी

❖एफ़. ए. मुजीब

मनुष्य ने जीवन को बेहतर बनाने के लिए अनगिनत रास्ते खोजे हैं। विज्ञान ने ब्रह्मांड के रहस्यों को समझने की कोशिश की, तकनीक ने दूरियाँ मिटा दीं, चिकित्सा ने अनेक रोगों के उपचार खोजे और आधुनिक सभ्यता ने मनुष्य को अभूतपूर्व सुविधाएँ प्रदान कीं। लेकिन इतनी सारी प्रगति के बावजूद एक मूल प्रश्न आज भी अपनी जगह क़ायम है—मनुष्य इस प्रगति का उपयोग किस उद्देश्य के लिए करे और स्वयं अपने जीवन को किन सिद्धांतों के आधार पर संचालित करे? यही वह बिंदु है जहाँ इस्लाम केवल एक धार्मिक पहचान के रूप में नहीं, बल्कि मानव जीवन के लिए एक पूर्ण और संतुलित सत्य के रूप में सामने आता है।

इस्लाम की मूल अवधारणा यह है कि यह मनुष्य द्वारा निर्मित विचारधारा नहीं, बल्कि उसी सृष्टिकर्ता की ओर से मिला मार्गदर्शन है जिसने मनुष्य को पैदा किया, उसे बुद्धि और विवेक दिया तथा इस संसार में ज़िम्मेदारी के साथ जीवन जीने की क्षमता प्रदान की। इसलिए इस्लाम को केवल सातवीं शताब्दी में प्रकट हुए धर्म के रूप में देखना उसके व्यापक स्वरूप को सीमित कर देना है। इस्लाम उस एक ईश्वर की उपासना और उसके मार्गदर्शन का नाम है, जो आरंभ से ही मानवता का मार्गदर्शन करने के लिए विभिन्न समुदायों और क्षेत्रों तक पैग़म्बरों के माध्यम से पहुँचती रही और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) पर अपनी अंतिम और पूर्ण अवस्था में पूरी मानवता के लिए सुरक्षित मार्गदर्शन बन गई।

इस्लाम की मूल अवधारणा यह है कि यह मनुष्य द्वारा निर्मित विचारधारा नहीं, बल्कि उसी सृष्टिकर्ता की ओर से मिला मार्गदर्शन है जिसने मनुष्य को पैदा किया, उसे बुद्धि और विवेक दिया तथा इस संसार में ज़िम्मेदारी के साथ जीवन जीने की क्षमता प्रदान की। इसलिए इस्लाम को केवल सातवीं शताब्दी में प्रकट हुए धर्म के रूप में देखना उसके व्यापक स्वरूप को सीमित कर देना है। इस्लाम उस एक ईश्वर की उपासना और उसके मार्गदर्शन का नाम है, जो आरंभ से ही मानवता का मार्गदर्शन करने के लिए विभिन्न समुदायों और क्षेत्रों तक पैग़म्बरों के माध्यम से पहुँचती रही और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) पर अपनी अंतिम और पूर्ण अवस्था में पूरी मानवता के लिए सुरक्षित मार्गदर्शन बन गई।

इस्लाम की वास्तविकता का पहला केंद्र एकेश्वरवाद है—एक ईश्वर, एक मानवता और एक मूल नैतिक ज़िम्मेदारी। यह विचार मनुष्य को मनुष्य के सामने झुकने से मुक्त करता है। जाति, भाषा, धन, सत्ता, परिवार और भौगोलिक पहचान मनुष्यों के बीच परिचय का आधार हो सकती हैं, लेकिन स्थायी श्रेष्ठता का मापदंड नहीं। जब मनुष्य यह समझता है कि सभी का सृष्टिकर्ता एक है, तो दूसरों के साथ उसका संबंध केवल स्वार्थ पर आधारित नहीं रहता; उसमें ज़िम्मेदारी, न्याय, करुणा और सम्मान का भाव पैदा होता है।

आज की दुनिया की अनेक समस्याएँ वास्तव में संसाधनों की कमी से अधिक मानवीय प्राथमिकताओं के असंतुलन का परिणाम हैं। संपत्ति मौजूद है, लेकिन उसके वितरण में असमानता है; जानकारी बहुत है, लेकिन विवेक कम होता जा रहा है; संपर्क के साधन बढ़े हैं, लेकिन दिलों के बीच दूरियाँ भी बढ़ रही हैं; स्वतंत्रता का विस्तार हुआ है, लेकिन ज़िम्मेदारी की भावना उसी गति से विकसित नहीं हुई। जब मनुष्य अपनी इच्छाओं को ही प्रगति का मानदंड बना लेता है, तो प्रगति भी कभी-कभी विनाश

का साधन बन जाती है। इस्लाम इसी बिंदु पर स्वतंत्रता को नैतिकता से, अधिकार को जवाबदेही से और विकास को मानव कल्याण से जोड़ता है।

इस्लाम मनुष्य को संसार से पलायन की शिक्षा नहीं देता, बल्कि संसार को सही ढंग से सँवारने और उसमें अपनी ज़िम्मेदारी निभाने का संदेश देता है। उपासना और व्यवहार, व्यक्ति और समाज, आत्मा और शरीर, अधिकार और कर्तव्य, संसार और परलोक—इन सभी के बीच संतुलन उसके जीवन-दर्शन की मूल विशेषता है। यही संतुलन मनुष्य को अतियों से बचाता है। न भौतिकता को जीवन का अंतिम उद्देश्य बनाता है और न आध्यात्मिकता के नाम पर सांसारिक ज़िम्मेदारियों से भागने की अनुमति देता है।

इस्लाम की प्रासंगिकता इसलिए भी बढ़ जाती है कि आज की दुनिया एक-दूसरे से गहराई से जुड़ी हुई है। एक क्षेत्र का निर्णय दूसरे क्षेत्र को प्रभावित करता है, एक देश का युद्ध पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था और शांति को प्रभावित कर सकता है और एक नई तकनीक कुछ ही क्षणों में करोड़ों लोगों के जीवन को बदल सकती है। ऐसे समय में मानवता को ऐसी विचारधारा की आवश्यकता है जो मनुष्यों को बाँटने के बजाय उनकी साझा मानवता को सामने लाए। इस्लाम मनुष्य को उसकी राष्ट्रीय, जातीय और भाषाई पहचान से वंचित नहीं करता, बल्कि इन पहचानों से ऊपर मानव एकता की चेतना विकसित करता है।

लेकिन इस्लाम की सच्चाई केवल इस दावे में नहीं है कि वह मनुष्य को ईश्वर से जोड़ता है; उसकी एक बड़ी कसौटी यह भी है कि वह मनुष्य को मनुष्य से किस प्रकार जोड़ता है। माता-पिता के अधिकार, बच्चों का पालन-पोषण, पड़ोसी का ध्यान, कमज़ोरों की सहायता, अनाथों और ज़रूरतमंदों की देखभाल, व्यापार में ईमानदारी, व्यवहार में न्याय, वचन का पालन और अत्याचार से बचना—ये सभी उस विचार का हिस्सा हैं कि अच्छा मनुष्य केवल उपासना करने वाला व्यक्ति नहीं, बल्कि दूसरों के लिए भी भलाई का माध्यम होता है।

इसीलिए इस्लाम को समझने का सही दृष्टिकोण यह नहीं है कि उसे केवल अतीत के किसी दौर की धार्मिक परंपरा मान लिया जाए। मूल प्रश्न यह है कि क्या उसके बुनियादी सिद्धांत आज के मनुष्य की समस्याओं से जुड़े हुए हैं? एकेश्वरवाद आज भी मनुष्य को शक्ति और धन की गुलामी से मुक्त कर सकता है, नैतिकता आज भी तकनीक को मानवता के अधीन रख सकती है, न्याय आज भी सामाजिक असमानता का मुक़ाबला कर सकता है, परिवार आज भी अकेलेपन और बिखराव का सहारा बन सकता है और जवाबदेही की भावना मनुष्य को बेलगाम इच्छाओं से रोक सकती है।

मनुष्य की सफलता केवल इस बात में नहीं है कि वह अधिक उत्पादन करे, अधिक कमाए, अधिक तेज़ यात्रा करे या अधिक जानकारी प्राप्त करे। वास्तविक सफलता यह है कि वह अपने जीवन के उद्देश्य को पहचाने, अपने अस्तित्व की वास्तविकता को समझे, अपने अधिकारों और शक्तियों का ज़िम्मेदारी के साथ उपयोग करे और ऐसा जीवन जिए जिसमें उसका अपना व्यक्तित्व भी निखरे तथा दूसरों के लिए भी भलाई पैदा हो।

मनुष्य की सफलता केवल इस बात में नहीं है कि वह अधिक उत्पादन करे, अधिक कमाए, अधिक तेज़ यात्रा करे या अधिक जानकारी प्राप्त करे। वास्तविक सफलता यह है कि वह अपने जीवन के उद्देश्य को पहचाने, अपने अस्तित्व की वास्तविकता को समझे, अपने अधिकारों और शक्तियों का ज़िम्मेदारी के साथ उपयोग करे और ऐसा जीवन जिए जिसमें उसका अपना व्यक्तित्व भी निखरे तथा दूसरों के लिए भी भलाई पैदा हो।

यही वह बिंदु है जहाँ इस्लाम मनुष्य के सामने केवल एक दावा नहीं, बल्कि जीवन का एक पूर्ण दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। इस्लाम सत्य है, क्योंकि वह मनुष्य को उसके सृष्टिकर्ता, उसकी प्रकृति और उसकी ज़िम्मेदारी से जोड़ता है। इस्लाम मानवता की आवश्यकता है, क्योंकि वह विकास को नैतिकता, स्वतंत्रता को ज़िम्मेदारी और शक्ति को न्याय के अधीन करता है। इस सत्य को हृदय और बुद्धि से स्वीकार करके उसके अनुरूप जीवन को ढाल लेना ही वह मार्ग है, जिसमें मनुष्य अपनी दुनिया को भी सार्थक बना सकता है और अपने परलोक की सफलता की नींव भी रख सकता है। ■■

इंसान बनकर करें ईश्वर की तलाश

❖सुफ़ियान अहमद

मनुष्य ईश्वर को खोजता है। कोई इबादतगाहों में, कोई तीर्थों में, कोई किताबों में, तो कोई अपनी तन्हाई में उसे तलाश करता है। वह आसमान की ओर देखता है और सोचता है कि कहीं तो वह शक्ति मौजूद है, जिसके क़रीब पहुँचकर जीवन को सुकून मिल सकता है। लेकिन ईश्वर की तलाश केवल बाहर की यात्राओं से पूरी नहीं होती। उसे पाने की राह इंसान के अपने भीतर से होकर गुज़रती है। अपने भीतर उस इंसान को तलाश करना पड़ता है, जिसके दिल में दूसरे के लिए दर्द हो, जिसकी आँखों में दूसरों के आँसुओं की पहचान हो और जिसके व्यवहार से किसी को तकलीफ़ न पहुँचे।

आपने कितनी इबादत (उपासना) की, यह महत्वपूर्ण है; लेकिन उससे भी महत्वपूर्ण यह है कि इबादत ने आपके भीतर कितना बदलाव पैदा किया। आपकी नमाज़ ने आपको कितना विनम्र बनाया? आपकी दुआ ने आपके दिल में कितनी करुणा पैदा की? आपके रोज़े ने आपको कितना संयम सिखाया? आपका धार्मिक ज्ञान आपको दूसरों से ऊँचा समझने के बजाय कितना बेहतर इंसान बना सका? ईश्वर के सामने झुकने का वास्तविक अर्थ तभी समझ में आता है, जब इंसान का अहंकार भी उसके साथ झुकने लगे।

ईश्वर का नाम लेना आसान है, लेकिन ईश्वर की रज़ा के मुताबिक़ जीवन जीना कठिन है। ज़बान से दीन की बातें करना आसान है, लेकिन अपने व्यवहार में दीन को उतारना असल परीक्षा है। आप इबादतगाह में सिर झुकाते हैं, लेकिन अगर किसी मजबूर के सामने आपका दिल कठोर हो जाता है, तो आपकी इबादत आपके चरित्र में कहाँ दिखाई देती है? आप दुआ के लिए हाथ उठाते हैं, लेकिन अगर आपके हाथ किसी ज़रूरतमंद की मदद के लिए आगे नहीं बढ़ते, तो आपकी दुआ की रूह कहाँ है?

इस्लाम इंसान को केवल इबादत का तरीक़ा नहीं सिखाता, बल्कि इंसान के साथ इंसान की तरह पेश आना भी सिखाता है। भूखे को खाना खिलाना, प्यासे को पानी पिलाना, ज़रूरतमंद की मदद करना, दुखी को दिलासा देना, पड़ोसी का ख़याल रखना, कमज़ोर के साथ नरमी बरतना और किसी के साथ अन्याय न करना; ये सब उस नैतिक जीवन का हिस्सा हैं, जिसकी ओर इस्लाम इंसान को बुलाता है। ईश्वर के प्रति सच्ची बंदगी का असर इंसान के व्यवहार में दिखाई देना चाहिए।

जिस दिल में रहम नहीं, वहाँ इबादत का केवल रस्म बन जाने का ख़तरा है। जिस मन में अहंकार भरा हो, वहाँ ज्ञान भी इंसान को विनम्र बनाने के बजाय उसके लिए घमंड का कारण बन सकता है। जिस जीवन में सच्चाई और इंसाफ़ नहीं, वहाँ धर्म की बातें खोखली लगने लगती हैं। और जिस व्यक्ति के भीतर अपने जैसे दूसरे इंसानों के लिए मुहब्बत और हमदर्दी नहीं, उसे अपने ईश्वर से अपने रिश्ते पर भी ग़ौर करना चाहिए।

आप कहते हैं, "मैं ईश्वर के क़रीब होना चाहता हूँ।" तो पहले यह देखिए कि क्या आपने ईश्वर के बनाए हुए इंसानों को सम्मान देना सीखा है? क्या आपने किसी के दुख को समझने की कोशिश की? क्या आपने किसी की ग़लती को माफ़ किया? क्या आपने कभी अपनी सुविधा छोड़कर किसी ज़रूरतमंद के लिए कुछ किया? क्या आपके कारण किसी के चेहरे पर मुस्कान आई? अगर आई है, तो यह केवल एक सामाजिक भलाई नहीं, बल्कि आपके आध्यात्मिक जीवन की भी निशानी है।

धार्मिक यात्राएँ मनुष्य को बहुत कुछ दे सकती हैं, लेकिन उनकी असली सफलता लौटने के बाद दिखाई देती है। अगर यात्रा से लौटकर भी वही ग़ुस्सा, वही लालच, वही ईर्ष्या, वही झूठ और वही अहंकार हमारे भीतर मौजूद है, तो हमने रास्ता तो तय किया, लेकिन शायद अपने भीतर की दूरी तय नहीं की। पैरों ने सफ़र किया, लेकिन आत्मा वहीं खड़ी रह गई।

इंसान की असली परीक्षा उस घड़ी में होती है, जब उसके पास किसी दूसरे पर ग़ुस्सा करने की ताक़त हो और वह माफ़ कर दे; जब वह किसी कमज़ोर का हक़ दबा सकता हो और उसके बजाय उसका हक़ दे दे; जब वह किसी की बुराई

कर सकता हो और अपनी ज़बान रोक ले; जब वह बदला ले सकता हो और इंसाफ़ के साथ माफ़ी को चुन ले। यही वे क्षण हैं, जहाँ धार्मिकता किताबों और शब्दों से निकलकर जीवन का हिस्सा बनती है।

ईश्वर को पाने के लिए असाधारण होने की ज़रूरत नहीं। एक सच्चा, नेक और संवेदनशील इंसान बनना ही आध्यात्मिक जीवन की बड़ी मंज़िल है। अच्छा इंसान बनने का अर्थ यह नहीं कि वह कभी ग़लती न करे। इंसान कमज़ोर है, उससे ग़लतियाँ होती हैं। असली बात यह है कि वह अपनी ग़लती को पहचानता है या नहीं, अपने भीतर झाँकता है या नहीं और ख़ुद को सुधारने की ईमानदार कोशिश करता है या नहीं। जो व्यक्ति अपनी कमज़ोरी को स्वीकार करके लौटने का रास्ता चुनता है, उसके भीतर अभी उम्मीद बाक़ी है।

ईश्वर की राह में सबसे बड़ी रुकावट अक्सर हमारा अपना "मैं" होता है। हम अपने ज्ञान, अपनी इबादत, अपने पद, अपनी दौलत और अपनी धार्मिकता पर इतना गर्व करने लगते हैं कि दूसरों को छोटा समझने लगते हैं। यही अहंकार इंसान और उसकी आत्मिक सच्चाई के बीच पर्दा बन जाता है। इसलिए अपने भीतर थोड़ा ख़ाली स्थान पैदा करें। अपने "मैं" को थोड़ा छोटा करें। नरम दिल बनें और दूसरों के दुख को महसूस करना सीखें।

फिर शायद हमे एहसास होगा कि ईश्वर की तलाश केवल दूर आसमान की ओर देखने का नाम नहीं है। वह हमे हमारी ज़िम्मेदारियों, हमारे रिश्तों, हमारे व्यवहार और हमारे चरित्र के बीच भी दिखाई देने लगेगा। जब हम किसी भूखे को खाना खिलाएंगे, किसी बेसहारा का सहारा बनेंगे, किसी दुखी के आँसू पोछेंगे और किसी कमज़ोर के साथ इंसाफ़ करेंगे, तब हमारी इबादत हमारे जीवन में उतरती हुई दिखाई देगी।

ईश्वर की बंदगी केवल यह नहीं कि हम उसके सामने झुकें; बल्कि यह भी है कि उसके बनाए हुए इंसानों के साथ न्याय, दया और भलाई का व्यवहार करें। जिस दिन दूसरे का दुख हमें भीतर से बेचैन करने लगेगा, जिस दिन किसी की ख़ुशी हमें अपनी ख़ुशी जैसी लगेगी और जिस दिन हमारा दिल अपने अहंकार से ज़्यादा इंसानियत के लिए जगह बनाने लगेगा, उस दिन हमारी आत्मिक यात्रा सही दिशा में आगे बढ़ रही होगी। क्योंकि ईश्वर को खोजने से पहले इंसान को अपने भीतर के इंसान को जगाना होता है। ■■

सन्तान

बच्चे परिवार का महत्त्वपूर्ण अंग हैं, ये ईश्वर का बहुमूल्य उपहार हैं। बच्चे की किलकारी माता-पिता ही नहीं, अन्य लोगों के दिल को भी गुदगुदाती है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने बच्चों को 'स्वर्ग के पुष्प' की संज्ञा दी। सन्तान के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण इस्लामी शिक्षाएँ संक्षेप में प्रस्तुत हैं–

1. सुरक्षा

"अपनी सन्तान को ग़रीबी के डर से मार न डालो, हम उन्हें भी और तुम्हें भी जीविका प्रदान करते हैं।"

(क़ुरआन, 17:31)

ध्यान रहे कि उपरोक्त आदेश की परिधि में भ्रूण-हत्या भी आती है।

2. स्वयं अच्छा नमूना बनें और बच्चों में भी अच्छे संस्कार डाले जाएँ (क़ुरआन, 66:6)। उन्हें ईश-भक्ति (नमाज़) का आदेश दिया जाए (क़ुरआन, 20:132)।

3. इस्लामी शिक्षा यह है कि बच्चों से मुहब्बत से पेश आओ। हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) बच्चों से बहुत प्यार करते थे। बच्चों को गोद में उठाकर घूमते थे। जो बच्चे सम्पर्क में रहते, उनको अच्छी बातें सिखाते थे। बच्चों की बचकानी हरकतों पर कभी ग़ुस्सा न करते। आपके नाती हज़रत हसन (रज़ि.) और हज़रत हुसैन (रज़ि.) नमाज़ पढ़ने के बीच भी आपकी पीठ पर चढ़ जाते थे। आजकल घर के लोगों के पास बच्चों के लिए समय नहीं है, इसलिए वे अवसाद का शिकार हो जाते हैं।

4. बच्चों को बुरी संगत में कभी बैठने न दिया जाए। हदीस में इसको एक सुन्दर उदाहरण से इस प्रकार समझाया गया है–

"अच्छे और बुरे दोस्त का उदाहरण ऐसा ही है जैसे इत्र (सुगन्ध) बेचने वाला और भट्टी फूँकने वाला लुहार। इत्र वाले से इत्र न भी लोगे तो सुगन्ध पाओगे और यदि भट्टी फूँकने वाले के पास जाओगे तो तुम्हारे कपड़े जलेंगे या दुर्गन्ध पाओगे।"

5. पुत्र-पुत्रियों के बीच भेदभाव रखना इस्लाम में वर्जित है।

विशेष आयोजन

बच्चे का स्वभाव और उसपर माहौल का असर

❖डॉ. ख़ान मुबश्शरा फ़िरदौस

"मेरा बच्चा बहुत ज़िद करने लगा है, यह खाना भी नहीं खाता और जो चीज़ इसे चाहिए वह लिए बिना ख़ामोश नहीं होता, अपने खिलौनों से बहुत जल्दी बोर हो जाता है, तोड़-फोड़ करने लगता है, स्कूल से भी शिकायत आ रही है कि अपने दोस्तों को दाँत से काट लेता है या नाख़ून से नोच देता है।"

सारी बातें सुनने के बाद हमें महसूस हुआ कि यह घर के माहौल की ओर साफ़ इशारा है कि बड़ों की उपेक्षा बच्चे में रवैये की तब्दीली का कारण है।

बच्चे की परवरिश सिर्फ़ उसे खाना खिलाने, स्कूल भेजने, कपड़े पहनाने और उसकी ज़रूरतें पूरी करने का नाम नहीं। बच्चे का व्यक्तित्व हर पल निर्मित हो रहा होता है। घर का माहौल, माँ-बाप का रवैया, बातचीत का अंदाज़, ध्यान, स्नेह, आलोचना, स्क्रीन का इस्तेमाल, खेलने के अवसर, यहाँ तक कि माँ-बाप के आपसी संबंध भी बच्चे के मन, भावनाओं और रवैयों पर असर डालते हैं। माँ-बाप अक्सर उस वक़्त परेशान होकर विशेषज्ञों से संपर्क करते हैं जब बच्चा अचानक ज़िद्दी, चिड़चिड़ा, आक्रामक, ख़ामोश या माँ-बाप से दूर महसूस होने लगता है। लेकिन बच्चे के रवैये में आने वाली हर तब्दीली के पीछे ज़रूरी नहीं कि कोई एक बड़ा हादसा हो। कभी-कभी रोज़मर्रा की छोटी-छोटी आदतें, जो बड़ों को मामूली महसूस होती हैं, बच्चे के स्वभाव और व्यक्तित्व पर लगातार असर डाल रही होती हैं।

बच्चे की फ़ितरत बदलने से पहले हमें अपने माहौल को देखना चाहिए। हो सकता है कि बच्चे की ज़िद के पीछे ध्यान पाने की ज़रूरत हो, उसकी ख़ामोशी के पीछे भावनात्मक दूरी हो, उसकी आक्रामकता के पीछे बेबसी हो और स्क्रीन से उसकी ज़्यादा दिलचस्पी के पीछे वास्तविक रिश्ते और जुड़ाव की कमी हो।

बच्चा एक स्वाभाविक मासूमियत, जिज्ञासा, प्रेम, सच्चाई और सीखने की क्षमता के साथ दुनिया में आता है। उसे हर पल किसी कृत्रिम प्रेरक की ज़रूरत नहीं होती। उसे अपनी दुनिया तलाश करने के लिए वक़्त, आज़ादी, संबंध, बातचीत, खेल, प्रकृति, खोज लगाने, जिज्ञासा को संतुष्ट करने के लिए कभी तन्हाई की, कभी ख़ामोशी की, कभी आज़ादी की, निडर अनुभव की और सब से बढ़कर सुरक्षित और शांत भावनात्मक माहौल चाहिए। मसला उस वक़्त पैदा होता है जब हम बच्चे के ख़ामोश इशारों को समझने के बजाए सिर्फ़ उसके रवैये को सही करने की कोशिश करते हैं। बच्चे का रवैया हमारे लिए दस्तक होती है कि हम उसके व्यक्तित्व पर होने वाले प्रभावों के कारणों को अपने घर में तलाश करें, लेकिन हम उन कारकों की तलाश के बजाए बच्चे के रवैये को सही करने की कोशिश करते हैं। उसे डाँटना चाहते हैं, इसे समझाना चाहते हैं, राह दिखाने की कोशिश करते हैं और कुछ माँ-बाप तो अपने इशारे पर अमल करने वाले बच्चे से संतुष्ट होते हैं। और आजकल इन सब अवसरों के अलावा माँ-बाप बच्चों को मोबाइल देकर बिठा देते हैं और निश्चिंत रहते हैं कि बच्चा शरारत नहीं कर रहा, बच्चा घर गंदा नहीं कर रहा, वो इलेक्ट्रिक में हाथ नहीं डाल रहा, बहुत सुविधा है कि माँ को अब उलझन कम है, वो मोबाइल में व्यस्त है।

बच्चे को व्यस्त रखने की कृत्रिम कोशिश

आज गैजेट्स, मोबाइल, टीवी, टैब या लैपटॉप बच्चों की ज़िंदगी का अभिन्न हिस्सा बन चुके हैं। एक बड़ा हिस्सा मोबाइल, टैबलेट, टीवी, कार्टून और तेज़ रफ़्तार डिजिटल सामग्री के बीच गुज़र रहा है। स्क्रीन बड़ों के लिए ख़ुद हर तरह से नुक़सानदेह नहीं, लेकिन बच्चे के लिए हर हाल में नुक़सानदेह है। बच्चे की ज़िंदगी में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और बौद्धिक विकास के लिए ज़रूरी है कि वह वास्तविक खेल, बातचीत, शारीरिक गतिविधि, क़ुदरती माहौल और मानवीय संबंध, कुछ देर तन्हाई, सामान पर अपना अधिकार और चीज़ों के तोड़-जोड़ से अनुभव हासिल

करे, लेकिन जब इन अवसरों से बच्चा वंचित होगा, तब समस्या पैदा होती है।

स्क्रीन का इस्तेमाल बच्चे उसी घर में करते हैं, जहाँ माँ-बाप के पास बच्चों के लिए वक़्त नहीं होता या माँ-बाप इसके नुक़सान से अनजान होते हैं।

बच्चे को हर बार रोने, बोर होने या ख़ामोश रहने पर मोबाइल थमा देना उसे अपनी भावनाओं और बोरियत से निपटने के स्वाभाविक तरीक़े सीखने से वंचित कर सकता है।

बच्चे को कभी-कभी ख़ामोश बैठने, सोचने, चीज़ें तलाश करने और ख़ुद से खेल बनाने की भी ज़रूरत होती है। अगर हर ख़ाली पल को स्क्रीन वाले पल से भर दिया जाए, तो उसके लिए इंतिज़ार, सब्र और ख़ुद को व्यस्त रखने की क्षमता का अभ्यास कम हो जाता है।

खिलौने और विकल्पों की भरमार

यह बात भी याद रहे कि खिलौनों की भरमार और संतुलन का उल्लंघन उसे लापरवाह, बेपरवाह और अनादर करने वाला बना सकता है। विकल्पों के मामले में भी माँ-बाप का बिल्कुल बेपरवाह हो जाना उसे अड़ियल और ज़िद्दी बना सकता है। इसलिए खिलौने देने के बाद इस पर ध्यान देना चाहिए कि उनसे हासिल किए जाने वाले वांछित परिणाम (Learning Outcomes) हासिल हुए या नहीं।

बहुत सारे खिलौने लाकर उनका ढेर लगा देना भी बच्चे का ध्यान भटका सकता है। माँ-बाप का मक़सद आमतौर पर बच्चे को ख़ुश करना होता है, लेकिन एक साथ बहुत सारी चीज़ें देने के बजाय सीमित और सार्थक विकल्प देना बच्चे को अधिक ध्यान से खेलने और रचनात्मक ढंग से सोचने का अवसर देता है।

कभी-कभी एक साधारण डिब्बा, कुछ रंग, मिट्टी, लकड़ी के ब्लॉक्स या घर के सुरक्षित बर्तन बच्चे के लिए महँगे और जटिल खिलौनों से कहीं अधिक रचनात्मक संभावनाएँ पैदा कर सकते हैं। असल उद्देश्य खिलौनों की संख्या बढ़ाना नहीं, बल्कि बच्चे के खेल को अर्थपूर्ण बनाना और उसमें उसकी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना है।

ज़रा अतीत में झाँकिए। पहले घरों में लड़कियाँ 'घर-घर' खेलती थीं। वे रसोई के बर्तन सजातीं, खाना पकाने का खेल खेलतीं और अपनी कल्पना की दुनिया में एक ज़िम्मेदार महिला की भूमिका निभाने की नक़ल करतीं। इसे मनोविज्ञान में मिरर न्यूरॉन्स के सक्रिय होने से जोड़कर देखा जाता है। बच्चा अपने आसपास के बड़ों की नक़ल करके बहुत कुछ सीखता है।

बचपन में सीखी गई यह ज़िम्मेदारी आगे चलकर उसके व्यवहार का हिस्सा बन सकती है और जीवन में काम आ सकती है। इसी तरह बच्चों को चीज़ों पर ध्यान देना और उन्हें सँभालकर रखना भी सिखाया जाना चाहिए। ख़ासकर लड़कों को अपनी पेंसिल, रबर, क़लम, टिफ़िन आदि सँभालकर और सावधानी से रखने की आदत डालनी चाहिए। उन्हें यह भी सिखाया जाना चाहिए कि बेवजह कॉपियों के पन्ने न फाड़ें और अपनी चीज़ों का ध्यान रखें।

यह भी बच्चे को ध्यान और ज़िम्मेदारी सिखाने का एक तरीक़ा है। आज आप मोबाइल का ज़्यादा इस्तेमाल करने वाले बच्चों को इस मामले में अक्सर लापरवाह पाएँगे। उनकी चीज़ों को सँभालने और छोटे-छोटे कामों पर ध्यान देने की आदत पर्याप्त रूप से विकसित नहीं हो पाती।

ख़ुद से सोचने और खोजने के अवसर

जब बच्चा किसी चीज़ को खोज रहा हो, ख़ुद से खेल रहा हो या किसी समस्या का हल ढूँढ़ने की कोशिश कर रहा हो, तो माँ-बाप का हर कुछ पल में हस्तक्षेप करना उसके अनुभव को सीमित कर सकता है। "ऐसे करो", "यहाँ रखो", "यह ग़लत है", "मैं बताती हूँ" जैसे लगातार निर्देश बच्चे को यह संदेश दे सकते हैं कि हर काम का सही तरीक़ा केवल बड़े ही जानते हैं।

इसके बजाय बच्चे को उचित सीमाओं के भीतर ख़ुद प्रयोग करने दें। अगर वह सुरक्षित तरीक़े से किसी समस्या को हल करने की कोशिश कर रहा है, तो तुरंत समाधान बताने के बजाय उसे सोचने का अवसर दें। यही छोटे-छोटे अनुभव आगे चलकर उसके आत्मविश्वास और समस्या-समाधान की क्षमता की नींव बनते हैं।

मसलन, दिमाग़ को शांत करने वाले खेलों में एक बर्तन में चावल डालकर उन्हें चम्मच से बोतल में भरना शामिल हो सकता है। इससे बच्चे में ठहराव और एकाग्रता आती है। लेकिन इस दौरान बार-बार यह निर्देश देना कि "चावल गिराना नहीं", "धीरे डालो" या "ऐसे नहीं, ऐसे करो", उसके प्रयोग करने और ग़लती से सीखने के अवसर को कम कर सकता है।

झूठी तारीफ़

जब माता-पिता को यह सलाह दी जाती है कि बच्चे

की तारीफ़ करें, ताकि उसका आत्मविश्वास बढ़े, तो वे कभी-कभी इसे केवल एक औपचारिक काम समझकर झूठी या बढ़ा-चढ़ाकर तारीफ़ करने लगते हैं।

याद रखना चाहिए कि बच्चे के सामने माँ-बाप का व्यवहार भी उसकी सीख का हिस्सा होता है। मसलन, अगर माता-पिता किसी शिक्षक से झूठ बोलते हैं कि उनका बच्चा मोबाइल इस्तेमाल नहीं करता, तो बच्चे को यह संदेश मिल सकता है कि झूठ बोलकर धोखा दिया जा सकता है। इसका बच्चे की नैतिक परवरिश पर बहुत ग़लत असर पड़ सकता है।

इसी तरह हर छोटी कामयाबी पर बनावटी या बढ़ा-चढ़ाकर तारीफ़ करना भी हमेशा ज़रूरी नहीं है। बच्चे से हर काम पर केवल "वाह! तुम तो सबसे अच्छे हो" कहने के बजाय उसकी कोशिश, ध्यान और मेहनत को पहचानना ज़्यादा सार्थक होता है।

मसलन, यह कहना कि "तुमने मुश्किल काम दोबारा कोशिश करके पूरा किया", बच्चे को काम और कोशिश की अहमियत समझाता है। इससे बच्चा केवल दूसरों की तारीफ़ का मोहताज होने के बजाय अपनी कोशिश की क़द्र करना सीखता है।

इससे बच्चे को अपने काम की तुलना दूसरों से करने के बजाय अपनी पिछली कोशिश से करने का संदेश मिलता है। वह समझता है कि "मेरा यह काम पहले से बेहतर हुआ है।"

माँ-बाप अक्सर बच्चे को प्रोत्साहित करने के लिए किसी दूसरे बच्चे का उदाहरण देते हैं—"फ़ुलाँ का बच्चा कितना अच्छा करता है।" लेकिन किसी दूसरे बच्चे की कामयाबी को बार-बार उदाहरण बनाना बच्चे के आत्मविश्वास को चोट पहुँचा सकता है। स्वस्थ तुलना का बेहतर तरीक़ा यह है कि बच्चे के वर्तमान काम की तुलना उसके अपने पिछले काम से की जाए। जैसे—"तुम्हारा यह काम पहले से बेहतर है" या "पहले के मुक़ाबले अब तुम ज़्यादा देर तक ध्यान लगा पा रहे हो

लगातार आलोचना, तुलना और नसीहत

बच्चे के व्यक्तित्व पर लगातार आलोचना, तुलना और नसीहत का गहरा असर पड़ सकता है। "देखो, फ़ुलाँ बच्चा कितना अच्छा है", "तुम उससे क्यों नहीं सीखते?" या "तुमसे तो कुछ नहीं होगा" जैसे वाक्य माँ-बाप सुधार या प्रोत्साहन की नीयत से बोल सकते हैं, लेकिन बार-बार सुनने पर बच्चा ख़ुद को दूसरों के पैमाने से मापने लग सकता है।

उसे यह महसूस हो सकता है कि माँ-बाप की मुहब्बत उसके व्यक्तित्व से नहीं, बल्कि उसकी कामयाबी और प्रदर्शन से जुड़ी है। इसके नतीजे में उसमें हीन भावना, नाकामी का डर, जलन या हर समय दूसरों से स्वीकृति पाने की चाह पैदा हो सकती है।

झूठ और वादा-ख़िलाफ़ी

अगर बच्चा माँ-बाप को झूठ बोलते या वादा-ख़िलाफ़ी करते देखता है, तो यह उसकी नैतिक परवरिश से जुड़ा गंभीर मामला है। कभी-कभी माँ-बाप बच्चे को बहलाने के लिए छोटा-सा झूठ बोल देते हैं या कोई वादा करके उसे पूरा नहीं करते। बड़ों के लिए यह मामूली बात हो सकती है, लेकिन बच्चा अपने माँ-बाप को अपना आदर्श मानता है।

बच्चा केवल वह नहीं सीखता जो उसे कहा जाता है, बल्कि वह उससे भी ज़्यादा सीखता है जो वह रोज़ अपने आसपास देखता है। इसलिए अगर हम चाहते हैं कि बच्चा सच बोले, तो हमारे अपने व्यवहार में भी सच्चाई, वादे की पाबंदी और ज़िम्मेदारी दिखाई देनी चाहिए।

बच्चे की भावनाओं को नज़रअंदाज़ करना

बच्चे की भावनाओं को नज़रअंदाज़ करना माँ-बाप और बच्चे के रिश्ते में एक ख़ामोश दूरी पैदा कर सकता है। जब बच्चा रो रहा हो और हम तुरंत कह दें, "बस करो, इसमें रोने की क्या बात है?" या जब वह परेशान हो और हम कहें, "तुम तो बेवजह ड्रामा कर रहे हो", तो हम उसकी समस्या हल करने के बजाय उसके एहसास को ही ख़ारिज कर रहे होते हैं।

बच्चे की हर इच्छा पूरी करना ज़रूरी नहीं है, लेकिन उसके एहसास को समझना और स्वीकार करना ज़रूरी है। "मैं देख रही हूँ कि तुम बहुत परेशान हो", "तुम्हें यह बात बुरी लगी है" या "पहले मुझे बताओ कि हुआ क्या है"—ऐसे वाक्य बच्चे को यह एहसास देते हैं कि उसकी भावनाओं पर ध्यान दिया जा रहा है।

जो माँ-बाप बच्चे की भावनाओं को समझते हैं, वे उसे दूसरों की भावनाएँ समझना भी सिखाते हैं। जिन बच्चों को भावनात्मक सुरक्षा का अनुभव अधिक मिलता है, वे बड़े होकर दूसरों की भावनाओं को भी अधिक अहमियत देना सीखते हैं।

इच्छाओं की तुरंत पूर्ति हानिकारक हो सकती है

हद से ज़्यादा सुरक्षा और बच्चे की हर इच्छा तुरंत

पूरी कर देना भी विचार करने वाली बात है। माता-पिता स्वाभाविक रूप से चाहते हैं कि उनका बच्चा तकलीफ़ से बचा रहे, लेकिन ज़िंदगी में हर निराशा, इंतिज़ार और नाकामी से बच्चे को बचाना संभव नहीं है।

अगर हर फ़रमाइश तुरंत पूरी कर दी जाए, हर मुश्किल माँ-बाप ख़ुद हल कर दें और बच्चे को इंतिज़ार या कोशिश का अवसर न मिले, तो उसे धैर्य और देर से मिलने वाली संतुष्टि का अनुभव कम होगा। उचित सीमाओं के साथ बच्चे को इंतिज़ार करने, कोशिश करने, छोटी नाकामी का सामना करने और फिर कोशिश करने का अवसर देना उसकी भावनात्मक परिपक्वता में मदद कर सकता है।

इसके विपरीत, प्राकृतिक वातावरण, खेल और सादगी बच्चे के लिए बहुत क़ीमती हैं। मिट्टी में खेलना, पौधे को पानी देना, पक्षियों को देखना, साइकिल चलाना, दौड़ना, लकड़ी के ब्लॉक्स से कुछ बनाना, कहानी सुनना या माता-पिता के साथ बैठकर सामान्य बातचीत करना उसके अनुभवों को व्यापक बनाता है।

हर गतिविधि का उद्देश्य शैक्षिक होना ज़रूरी नहीं है। कभी-कभी बच्चे के साथ केवल मौजूद रहना ही उसके साथ रिश्ते को मज़बूत करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम होता है।

माँ-बाप की भावनात्मक मौजूदगी

लारा और जैक मनोवैज्ञानिक हैं और सोशल मीडिया पर हमारे परिचित हैं। लारा कहती हैं कि वह एक कामकाजी महिला हैं, लेकिन जिस दिन उनके बेटे या पति के हाथ से काँच का गिलास या प्लेट टूट जाए, उस दिन वह अपने सारे कार्यक्रम रद्द कर देती हैं। वह ख़ुद से कहती हैं कि आज मेरे पति या बच्चे को मेरी ज़रूरत है।

गिलास का टूटना आपके लिए लापरवाही हो सकता है, लेकिन इसके पीछे कभी-कभी किसी व्यक्ति की मानसिक परेशानी या ऐसा तनाव हो सकता है, जिसे वह किसी से साझा नहीं कर पा रहा हो। ऐसे समय में पति के लिए पत्नी और बच्चे के लिए माँ-बाप की भावनात्मक मौजूदगी बहुत ज़रूरी होती है। भावनात्मक रूप से उपलब्ध न होना बच्चे को भरे-पूरे घर में भी अकेला महसूस करा सकता है।

माँ-बाप की भावनात्मक मौजूदगी बच्चे की परवरिश के सभी पहलुओं में सबसे बुनियादी है। हो सकता है कि माँ-बाप और बच्चा एक ही कमरे में हों, लेकिन माता-पिता का ध्यान लगातार मोबाइल, काम, टीवी या अपनी चिंताओं में लगा हो। शारीरिक मौजूदगी और भावनात्मक मौजूदगी एक जैसी चीज़ें नहीं हैं।

बच्चे को यह महसूस होना चाहिए कि जब वह माँ-बाप से बात करता है, तो उसे सुना जा रहा है। रोज़ केवल पंद्रह से बीस मिनट ऐसे रखे जा सकते हैं, जब मोबाइल एक तरफ़ हो, टीवी बंद हो और माँ-बाप का पूरा ध्यान बच्चे पर हो। इन कुछ मिनटों में बच्चे से पूछा जा सकता है—"आज तुम्हें सबसे अच्छी बात क्या लगी?", "क्या कोई बात तुम्हें परेशान कर रही है?" या "आज तुमने क्या नया देखा?"

घर का भावनात्मक माहौल भी बच्चे से छिपा नहीं रहता। बच्चे बहुत संवेदनशील होते हैं। अगर माँ-बाप के बीच लगातार तनाव, बेरुख़ी, ताने, चीख़-पुकार या अस्थिरता हो, तो बच्चा उसे महसूस कर सकता है, भले ही उससे सीधे कुछ न कहा जाए।

इसीलिए बच्चे के लिए शांत और सुरक्षित घर केवल आराम की जगह नहीं, बल्कि उसकी भावनात्मक सुरक्षा का भी एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

माँ-बाप को यह याद रखना चाहिए कि बच्चे हमारी बातों से ज़्यादा हमारे व्यवहार से सीखते हैं। अगर हम चाहते हैं कि बच्चा धैर्य रखे, तो उसे हमारा धैर्य देखना होगा। अगर हम चाहते हैं कि वह सच बोले, तो उसे हमारी सच्चाई दिखाई देनी चाहिए। अगर हम चाहते हैं कि उसका मोबाइल के साथ संतुलित रिश्ता हो, तो उसे हमारे मोबाइल इस्तेमाल में भी संतुलन दिखाई देना चाहिए। अगर हम चाहते हैं कि वह दूसरों की भावनाओं का सम्मान करे, तो हमारे व्यवहार में भी उसे सम्मान दिखाई देना चाहिए।

बच्चे की परवरिश किसी एक दिन की योजना नहीं, बल्कि रोज़ के छोटे-छोटे फ़ैसलों का नतीजा है। हमें हर बार आदर्श माँ-बाप बनने की ज़रूरत नहीं है। हमें बस इतना करना है कि हम बच्चे को देखें, सुनें, समझें और अपने व्यवहार पर भी नज़र रखें।

बच्चे की फ़ितरत बदलने से पहले हमें अपने माहौल को देखना चाहिए। हो सकता है कि बच्चे की ज़िद के पीछे ध्यान पाने की ज़रूरत हो, उसकी ख़ामोशी के पीछे भावनात्मक दूरी हो, उसकी आक्रामकता के पीछे बेबसी हो और स्क्रीन से उसकी ज़्यादा दिलचस्पी के पीछे वास्तविक रिश्ते और जुड़ाव की कमी हो। ■■

सुविधा बनाम सीखने की प्रक्रिया

एआई और हमारे बच्चों की शिक्षा

❖सुफ़ियान अहमद

एआई के फ़ायदे-नुक़सान की चर्चा इसके आगमन के साथ ही शुरू हो गई थी, लेकिन अब बहस उस मक़ाम पर पहुंच चुकी है, जहां इसके इस्तेमाल का असर बच्चों की शिक्षा, उनके बौद्धिक विकास और उनकी सीखने की क्षमता को लेकर आशंकाएं व्यक्त की जाने लगी हैं। इस संबंध में सबसे बड़ा सवाल यह है कि कहीं एआई बच्चों को सोचने से पहले जवाब पाने का आदी तो नहीं बना रहा।

अमेरिका के न्यूयार्क शहर में इसी चिंता की एक झलक प्रशासन के हालिया फ़ैसले में दिखाई दी। वहां के मेयर ज़ोहरान ममदानी ने 2026-27 के शैक्षणिक वर्ष के लिए प्री-स्कूल से आठवीं कक्षा तक विद्यार्थियों द्वारा 'जेनरेटिव एआई' के इस्तेमाल पर रोक लगा दी है। इसके दायरे में शहर के क़रीब छह लाख विद्यार्थी आएंगे। साथ ही 'स्क्रीन टाइम' सीमित करने और उच्च विद्यालय के विद्यार्थियों में साल में दो बार एआई तथा उससे जुड़ी आलोचनात्मक समझ विकसित करने की व्यवस्था की गई है।

शिक्षा का उद्देश्य बच्चे को हर सवाल का तुरंत जवाब देने वाली मशीन बनाना नहीं है। शिक्षा का उद्देश्य उसे ऐसा मनुष्य बनाना है, जो सवाल पूछ सके, सोच सके, ग़लती कर सके, उससे सीख सके और अपने विवेक से निर्णय ले सके।

बच्चे को जवाब नहीं, सोचने का मौक़ा चाहिए

इस फ़ैसले को केवल तकनीक पर रोक के रूप में देखना ठीक नहीं होगा। इसके पीछे एक सीधी-सी बात है कि बच्चे को पहले ख़ुद सोचने, समझने और सीखने दिया जाए।

एक छोटा बच्चा जब किसी सवाल का जवाब खोजता है तो वह सिर्फ़ जानकारी हासिल नहीं कर रहा होता। वह भाषा सीख रहा होता है, अपनी स्मृति का इस्तेमाल कर रहा होता है, तर्क करना सीख रहा होता है और अपनी जिज्ञासा को दिशा दे रहा होता है। वह शिक्षक से सवाल करता है, सहपाठी से बहस करता है, किताब के पन्ने पलटता है, ग़लती करता है और फिर उसे सुधारता है। यही उसकी सीखने की यात्रा है। अगर इस यात्रा के हर कठिन पड़ाव पर एआई तैयार उत्तर लेकर खड़ा हो जाए, तो बच्चा उत्तर तक तो पहुंच जाएगा, लेकिन शायद उस रास्ते पर चलना नहीं सीख पाएगा।

काम पूरा होना सीखना नहीं है

'जेनरेटिव एआई' ने बच्चों के लिए पढ़ाई से जुड़े कई काम बेहद आसान कर दिए हैं। कोई विद्यार्थी महज़ कुछ सेकंड में निबंध लिखवा सकता है, गणित के सवाल का समाधान पा सकता है, किसी पुस्तक का सारांश तैयार करवा सकता है, प्रस्तुति की सामग्री खोज सकता है और शोध-पत्र की संरचना तक प्राप्त कर सकता है। लेकिन यहां एक बुनियादी सवाल है; क्या काम पूरा होना और सीखना एक ही बात है?

दुनिया की आर्थिक प्रगति और विश्व व्यापार के लिए काम करने वाले आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन की 'डिजिटल एजुकेशन आउटलुक-2026' रिपोर्ट इस अंतर की ओर विशेष रूप से ध्यान दिलाती है। इसके मुताबिक़, सामान्य 'जेनरेटिव एआई' की सहायता से विद्यार्थी बेहतर उत्तर तैयार कर सकते हैं, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि उनकी वास्तविक सीख भी उतनी ही बेहतर हुई है।

यह बात बच्चों के मामले में और गंभीर हो जाती है। क्योंकि बच्चे के लिए किसी सवाल को हल करने में लगने वाला अतिरिक्त समय भी बेकार नहीं होता। कठिन पाठ को समझने में लगने वाला समय, गणित के सवाल पर अटकना, ग़लत उत्तर देना, उसे फिर से हल करना, किताब में ढूंढ़ना और शिक्षक से पूछना; ये सब उसके दिमाग़ को काम करने के अवसर देते हैं।

कुछ अध्ययनों में पाया गया कि एआई की सहायता से बेहतर प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थी असल परीक्षा में पिछड़ जाते हैं। इसका एक कारण यह हो सकता है कि एआई ने वह

मानसिक श्रम कर दिया, जो विद्यार्थी को ख़ुद करना था। यहीं से सुविधा और सीखने के बीच का अंतर सामने आता है।

बचपन की सबसे बड़ी ज़रूरत

एक बच्चे को हर सवाल का तुरंत जवाब नहीं चाहिए। कई बार उसे सवाल के साथ कुछ देर रहना भी चाहिए। उसे यह सोचने का अवसर मिलना चाहिए कि ऐसा क्यों हुआ। उसे अनुमान लगाना चाहिए। उसका अनुमान ग़लत भी हो सकता है। उसे फिर कोशिश करनी चाहिए। उसे किसी दोस्त से पूछना चाहिए। शिक्षक से बहस करनी चाहिए। कभी उत्तर न मिलने पर अगले दिन तक इंतिज़ार भी करना चाहिए। यही अनुभव धीरे-धीरे उसके भीतर आत्मविश्वास, तर्क, धैर्य और स्वतंत्र सोच पैदा करते हैं।

छोटे बच्चे की भाषा, स्मृति, तर्क, कल्पना और सामाजिक कौशल अभी विकसित हो रहे होते हैं। उसे हाथ से लिखना है, कहानी पढ़नी है, अपने शब्दों में जवाब देना है और कभी-कभी ग़लत उत्तर देकर शर्मिंदा भी होना है। इन अनुभवों को केवल इसलिए हटा देना कि मशीन उनसे कहीं तेज़ काम कर सकती है, शिक्षा को सुविधाजनक तो बना सकता है, लेकिन ज़रूरी नहीं कि बेहतर भी बनाए।

इसलिए बच्चों और विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को एआई के इस्तेमाल के मामले में एक ही श्रेणी में रखना उचित नहीं होगा। यही वह फ़र्क़ है, जिसे न्यूयार्क के फ़ैसले में भी देखा जा सकता है। दिव्यांग और कंप्यूटर विज्ञान सीख रहे विद्यार्थियों पर यह रोक लागू नहीं होगी। यानी बात एआई को पूरी तरह ख़ारिज करने की नहीं, बल्कि बच्चे की ज़रूरत और उसकी उम्र के अनुसार उसके इस्तेमाल को तय करने की है।

माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर एआई साक्षरता शुरू की जा सकती है, लेकिन बच्चों को तैयार उत्तर देने के बजाय उसकी सीमाओं और जोखिमों को समझाना ज़रूरी है। उच्च कक्षाओं में एआई का शिक्षक-नियंत्रित इस्तेमाल हो सकता है और विश्वविद्यालय स्तर पर इस तकनीक के कारण नई मूल्यांकन प्रणाली विकसित करने की आवश्यकता है।

दुनिया भी इसी दिशा में कुछ क़दम उठा रही है। आस्ट्रेलिया ने स्कूलों के लिए राष्ट्रीय एआई नियमावली तैयार की है। इसके छह प्रमुख आधार हैं; शिक्षण एवं सीखने की प्रक्रिया, मानव एवं सामाजिकता, पारदर्शिता, निष्पक्षता, ज़िम्मेदारी और निजता की सुरक्षा। ब्रिटेन का शिक्षा विभाग भी स्कूलों और कालेजों को एआई के सुरक्षित इस्तेमाल के लिए डेटा के नियमन और बौद्धिक संपदा अधिकार जैसे मुद्दों पर प्रशिक्षण सामग्री उपलब्ध करा रहा है।

यानी सवाल अब यह नहीं है कि बच्चों को एआई से हमेशा दूर रखा जाए या उन्हें उसके हवाले कर दिया जाए। सवाल यह है कि बच्चे की उम्र और ज़रूरत के अनुसार एआई उसके सीखने में कहां और कितनी मदद करे। भारत को भी इसी आधार पर राष्ट्रीय शैक्षणिक एआई नीति की आवश्यकता है।

शिक्षक और बच्चे के बीच मशीन नहीं आनी चाहिए

इस पूरी प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका सबसे महत्त्वपूर्ण है। शिक्षक केवल जानकारी देने वाला व्यक्ति नहीं होता। वह बच्चे की ग़लती पहचानता है, उसके सवाल को समझता है, उसके आत्मविश्वास को बढ़ाता है और कई बार उस सवाल का जवाब भी नहीं देता, बल्कि बच्चे को जवाब खोजने के लिए प्रेरित करता है।

एआई यह काम कुछ हद तक आसान कर सकता है, लेकिन शिक्षक का स्थान नहीं ले सकता।

कैलकुलेटर ने गणित को समाप्त नहीं किया, कंप्यूटर ने बुद्धि को समाप्त नहीं किया और इंटरनेट ने शिक्षक को अप्रासंगिक नहीं बनाया। एआई भी शिक्षा को समाप्त नहीं करेगा, बशर्ते उसे बच्चे की सीखने की प्रक्रिया का सहायक बनाया जाए, उसका प्रतिस्थापन नहीं।

सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि बच्चा एआई का इस्तेमाल करना सीखे, लेकिन एआई के कारण सोचना छोड़ न दे। वह एआई से उत्तर ले सकता है, लेकिन उत्तर पर सवाल करना भी जाने। वह उससे जानकारी हासिल कर सकता है, लेकिन उसकी सत्यता परखना भी जाने। वह उससे अपनी भाषा सुधार सकता है, लेकिन अपने विचार ख़ुद बनाना न छोड़े।

वस्तुतः शिक्षा का उद्देश्य बच्चे को हर सवाल का तुरंत जवाब देने वाली मशीन बनाना नहीं है। शिक्षा का उद्देश्य उसे ऐसा मनुष्य बनाना है, जो सवाल पूछ सके, सोच सके, ग़लती कर सके, उससे सीख सके और अपने विवेक से निर्णय ले सके।

एआई बच्चे के सामने समाधान रख सकता है, लेकिन उस समाधान तक पहुंचने की यात्रा ही बच्चे को सीखने वाला मनुष्य बनाती है। इसलिए शिक्षा का भविष्य इस बात से तय नहीं होगा कि हमारे बच्चों के पास कितना शक्तिशाली एआई है, बल्कि इससे तय होगा कि एआई उपलब्ध होने के बावजूद वे ख़ुद कितना सोचते, समझते और सीखते हैं। ■■

शादी और ज़िम्मेदारी से दूर भागते युवा, क्या है समाधान?

❖अर्शी ख़ानम



वर्तमान समय में जब हम समाज का अवलोकन करते हैं तो हमें युवाओं की बदलती सोच, उनकी प्राथमिकताओं और जीवन के प्रति उनके दृष्टिकोण में बड़ा परिवर्तन नज़र आता है। आज का युवा सिर्फ़ शादी से ही नहीं, बल्कि कई तरह की सामाजिक और पारिवारिक ज़िम्मेदारियों से भी दूरी बनाना चाहता है। लड़का हो या लड़की, दोनों के मन में कहीं न कहीं यह सोच घर करने लगी है कि ज़िम्मेदारी का मतलब है अपनी आज़ादी खो देना, अपनी ख़्वाहिशों को पीछे छोड़ देना और पूरी ज़िंदगी ऐसे ढर्रे पर चलना, जिसे समाज ने पहले से तय कर रखा है।

लेकिन क्या सच में ज़िम्मेदारी का मतलब यही है? शायद इस सवाल का जवाब तलाश करने से पहले हमें उस सोच को समझना होगा, जिसने शादी और ज़िम्मेदारियों को लेकर हमारी पूरी समझ और नज़रिया तैयार किया है।

हम बचपन से ही एक तय सामाजिक सोच और माहौल को देखते हुए बड़े होते हैं। लड़की है तो उसे सिखाया जाता है कि घर संभालना है, समझौता करना है और सबको साथ लेकर चलना है। एक उम्र के बाद शादी के बारे में सोचना है और शादी के बाद नए घर को अपना बनाना है। लड़का है तो उसे सिखाया जाता है कि उसे कमाना है, परिवार की ज़िम्मेदारी उठानी है, माता-पिता के बुढ़ापे का सहारा बनना है और तभी वह एक "ज़िम्मेदार पुरुष" कहलाएगा। एक उम्र आते ही समाज का अगला सवाल भी लगभग तय होता है—"अब शादी कब कर रहे हो?"

बात यहीं ख़त्म नहीं होती। लड़की से कहा जाता है, "अभी अपने घर में हो, शादी के बाद अपने घर जाकर जो करना हो करना।" और जब वह शादी करके दूसरे घर जाती है तो कई बार वहाँ भी उसे सुनने को मिलता है कि "यह तुम्हारा मायका नहीं है।"

सोचिए, दो घर होने के बावजूद अगर किसी लड़की को बार-बार यह बताया जाए कि इनमें से कोई भी पूरी तरह उसका अपना नहीं है, तो उसके मन में अपने अस्तित्व को लेकर कैसी भावना पैदा होगी? शायद यहीं से एक डर जन्म लेता है—अपनी पहचान खो देने का डर, अपने फ़ैसले खो देने का डर, अपने सपनों से दूर हो जाने का डर और सबसे बढ़कर यह डर कि शादी के बाद उसका जीवन केवल दूसरों की उम्मीदों को पूरा करने तक सीमित हो जाएगा।

जब कोई लड़की अपनी माँ, दादी, नानी, बुआ, मौसी या बड़ी बहन को वर्षों तक अपने लिए समझौते करते हुए देखती है, तो उसके मन में शादी और ज़िम्मेदारियों की एक ऐसी तस्वीर बन सकती है, जिससे उसे डर लगने लगे। उसने देखा है कि घर संभालने वाले व्यक्ति को अपने लिए समय

नहीं मिलता, अपनी ख़्वाहिशें पीछे रखनी पड़ती हैं और परिवार की ख़ुशी के लिए बार-बार ख़ुद को पीछे करना पड़ता है। फिर समाज भी इसी तस्वीर को शादी का सामान्य रूप बनाकर उसके सामने रख देता है।

लेकिन क्या शादी सच में ऐसी ही होती है? क्या शादी का मतलब अपनी पहचान खोकर किसी दूसरे परिवार में ख़ुद को मिला देना है? नहीं। शादी तो दो अलग-अलग ज़िंदगियों का साथ आना है, जहाँ दोनों मिलकर एक बेहतर ज़िंदगी बनाते हैं, न कि कोई एक अपनी पहचान खो दे। यह दो लोगों की साझेदारी है, जिसमें दोनों के सपनों, व्यक्तित्व, कर्तव्य और निर्णय को समान महत्व मिलना चाहिए। शायद इसीलिए आज युवाओं का शादी से दूर भागना सिर्फ़ उनकी समस्या नहीं है। कहीं न कहीं यह उस सोच का नतीजा भी है, जो हमने पीढ़ियों से उनके सामने रखी है, जहाँ शादी को साझेदारी से ज़्यादा त्याग, समझौते और बोझ के रूप में दिखाया गया।

अगर इस्लाम में शादी की मूल भावना देखें तो परिस्थिति कुछ अलग ही प्रतीत होती है। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) और हज़रत ख़दीजा (रज़ि) का निकाह आपसी सम्मान, भरोसे और साथ का सुंदर उदाहरण है। हज़रत ख़दीजा (रज़ि) एक सफल और सम्मानित व्यवसायी थीं और उम्र में भी उनसे बड़ी थीं, लेकिन निकाह के बाद उनकी पहचान और उनका व्यक्तित्व ख़त्म नहीं हुआ। दोनों ने एक-दूसरे की ज़िंदगी और ज़िम्मेदारियों का सम्मान किया। शायद आज हमें शादी को इसी नज़रिए से समझने की ज़रूरत है। यह किसी की पहचान या उपलब्धियों का अंत नहीं, बल्कि दो लोगों का एक-दूसरे की ताक़त बनना है। अगर हम शादी को वास्तविक अर्थ में समझाएँ, तो शायद युवाओं को उससे डरने के बजाय उसकी ख़ूबसूरती समझ आए।

लेकिन शादी का यह दबाव सिर्फ़ लड़कियों पर नहीं है। लड़कों के हिस्से में भी समाज ने अपनी उम्मीदों का एक अलग बोझ रखा है—"अच्छी नौकरी होनी चाहिए", "कमाई अच्छी होनी चाहिए", "अपना घर होना चाहिए" और "माता-पिता के बुढ़ापे का सहारा बनना है।" ये बातें ज़िम्मेदारी की सीख हैं, लेकिन जब इन्हें लगातार दबाव की तरह रखा जाए तो वही ज़िम्मेदारी बोझ लगने लगती है। फिर लड़के को लगता है कि शादी का मतलब पत्नी, बच्चों और माता-पिता की सारी ज़िम्मेदारियाँ एक साथ उठाना है। जो ज़िम्मेदारी प्रेम और अपनापन से निभाई जा सकती थी, वह सामाजिक दबाव के कारण डर का रूप ले लेती है।

शायद इसलिए कि हमने ज़िम्मेदारी को सहज बनाने के बजाय उसे बोझ जैसा बना दिया है। हमने यह कम समझाया कि परिवार की ज़िम्मेदारी मिलकर निभाई जा सकती है, पति-पत्नी एक-दूसरे का सहारा बन सकते हैं और माता-पिता व बच्चों के बीच डर से ज़्यादा बातचीत ज़रूरी है। किसी रिश्ते में रहना ख़ुद को खो देना नहीं, बल्कि अपनी पहचान के साथ दूसरे के साथ आगे बढ़ना है। और यहीं से परवरिश की अहमियत सामने आती है।

बच्चा ज़िम्मेदारी किताबों से नहीं, अपने घर को देखकर सीखता है। वह देखता है कि माँ-बाप एक-दूसरे से कैसे बात करते हैं, एक-दूसरे के सपनों और फ़ैसलों की कितनी क़द्र करते हैं और उसकी बात सुनी जाती है या सिर्फ़ अपनी बात मनवाई जाती है। इसलिए परवरिश सिर्फ़ पढ़ाई और करियर तक सीमित नहीं है। यहीं से बच्चे के मन में रिश्तों, सही-ग़लत और अपनी और दूसरों की ज़िम्मेदारियों की पहली समझ बनती है।

आज हम बच्चों की पढ़ाई और करियर को लेकर काफ़ी गंभीर रहते हैं। स्कूल से लेकर विषय और करियर तक, हम हर चीज़ सोच-समझकर चुनते हैं और चाहते हैं कि बच्चे की क़ाबिलियत सही दिशा में निखरे। लेकिन क्या हम उसके भावनात्मक और सामाजिक जीवन के लिए भी उतना ही सोचते हैं? क्या हम उससे रिश्तों, मतभेद, ज़िम्मेदारी और अपनी बात रखने के तरीक़े पर बात करते हैं? क्या हम उसे समझाते हैं कि किसी की परवाह करना ग़ुलामी नहीं है और अपनी ज़रूरतों के साथ दूसरों की ज़रूरतों का सम्मान करना भी ज़रूरी है?

आज कई पारिवारिक परेशानियों के पीछे कहीं न कहीं बातचीत की कमी दिखाई देती है। कई बार बच्चों की छोटी-सी माँग, उनकी इच्छा या माता-पिता की उम्मीदें इतनी बढ़ जाती हैं कि बात बहुत दूर तक चली जाती है। बच्चों को हर सुविधा देना ही प्यार नहीं है और हर बात पर रोक लगाना ही अनुशासन नहीं है। सही परवरिश शायद इन दोनों के बीच का संतुलन है, जहाँ बच्चे को अपनी बात कहने की आज़ादी मिले, लेकिन दूसरों की बात सुनने की आदत भी हो; अपनी ज़रूरतों को समझे, लेकिन दूसरों की ज़रूरतों की भी क़द्र करे; और जायज़-नाजायज़, सही-ग़लत का फ़र्क़ भी समझे।

मैंने ऐसे परिवार भी देखे हैं जहाँ यह संतुलन बहुत अच्छे

से बना हुआ है। माता-पिता बच्चों को डराकर नहीं रखते और न ही उन पर अपनी हर उम्मीद थोपते हैं। बच्चे भी बिना डर के अपने माता-पिता से हर तरह की बात कर पाते हैं और माता-पिता उनकी बात समझने की कोशिश करते हैं। ऐसे घरों में ज़िम्मेदारी बोझ या आदेश नहीं लगती, बल्कि रिश्तों का स्वाभाविक हिस्सा बन जाती है। शायद हमें ऐसे ही परिवारों को सामान्य बनाना है।

आज के युवाओं से मेरी बस इतनी बात है—ज़रूरी नहीं कि जो आपने देखा है, वही आपके साथ भी हो। अगर आपने अपने आसपास शादी को सिर्फ़ समझौते और ज़िम्मेदारियों के बोझ के रूप में देखा है, तो ज़रूरी नहीं कि आपकी शादी भी वैसी ही हो। ज़िम्मेदारी निभाने का मतलब ख़ुद को खो देना नहीं है। अगर आपने कोई ग़लत तरीक़ा देखा है, तो उससे भागने के बजाय यह सोचिए कि उसे बेहतर कैसे बनाया जा सकता है। बदलाव की शुरुआत यहीं से होती है।

बदलाव किसी एक दिन, किसी एक क़ानून या किसी एक इंसान से नहीं आएगा। बदलाव तब आएगा जब हम हर दिन थोड़ा-थोड़ा अपनी सोच बदलेंगे। जब हम ज़िम्मेदारी को बोझ नहीं, साझेदारी समझेंगे। जब शादी को समाज के दबाव में नहीं, बल्कि समझदारी और आपसी सहमति से लिया गया फ़ैसला मानेंगे। जब हम बच्चों से सिर्फ़ यह नहीं पूछेंगे कि "बड़े होकर क्या बनोगे?" बल्कि यह भी पूछेंगे कि "कैसे इंसान बनना चाहते हो?"

इंसान की फ़ितरत ही ऐसी है कि वह समाज और रिश्तों के बीच रहकर जीता है। हम अकेले पैदा नहीं होते, अकेले बड़े नहीं होते और हमारी ख़ुशियाँ भी सिर्फ़ हमारी नहीं होतीं। परिवार, दोस्त, पड़ोसी और रिश्ते हमारी ज़िंदगी का हिस्सा हैं। इसलिए "मैं आज़ाद हूँ, मुझे किसी की ज़रूरत नहीं और मैं किसी ज़िम्मेदारी में नहीं पड़ना चाहता/चाहती" जैसी सोच कुछ समय के लिए अच्छी लग सकती है, लेकिन ज़िंदगी को पूरी तरह रिश्तों और ज़िम्मेदारियों से अलग करके जीना हमारी फ़ितरत नहीं है।

हमें ऐसे घर और रिश्ते चाहिए जहाँ बेटी अपनी पहचान के साथ बेटी और बहू दोनों बनकर रह सके, बेटा सिर्फ़ कमाने वाला नहीं बल्कि एक समझदार और संवेदनशील इंसान भी बने। जहाँ पत्नी का करियर परिवार के ख़िलाफ़ न समझा जाए और पति की भावनाओं को कमज़ोरी न माना जाए। जहाँ माता-पिता का सम्मान डर से नहीं, प्यार से हो और बच्चों की आज़ादी का मतलब लापरवाही न हो।

शादी न तो पूरी ज़िंदगी सिर्फ़ समझौते करते रहने का नाम है और न ही ऐसा बोझ जिसे जितनी जल्दी हो सके उतार दिया जाए। यह ज़िंदगी का एक अहम रिश्ता है, इसलिए इसे समझकर और सोच-समझकर अपनाना चाहिए। किसी भी ज़िम्मेदारी को स्वीकार करने से पहले उसके असल मायने समझना ज़रूरी है, वह हमारी ज़िंदगी और हमारे व्यक्तित्व में क्या जोड़ सकती है और हम उसे बोझ बनाने के बजाय किस तरह प्यार, समझ और आपसी सहमति के साथ निभा सकते हैं।

और अंत में मैं यही कहना चाहूँगी कि बदलाव किसी एक दिन, किसी एक क़ानून या किसी एक इंसान से नहीं आएगा। बदलाव तब आएगा जब हम हर दिन थोड़ा-थोड़ा अपनी सोच बदलेंगे। जब हम ज़िम्मेदारी को बोझ नहीं, साझेदारी समझेंगे। जब शादी को समाज के दबाव में नहीं, बल्कि समझदारी और आपसी सहमति से लिया गया फ़ैसला मानेंगे। जब हम बच्चों से सिर्फ़ यह नहीं पूछेंगे कि "बड़े होकर क्या बनोगे?" बल्कि यह भी पूछेंगे कि "कैसे इंसान बनना चाहते हो?"

आख़िरकार, ख़ुद को मिटाकर जीना भी सही नहीं है और ख़ुद को सबसे ऊपर रखकर बाक़ी रिश्तों से दूर हो जाना भी नहीं। ज़िंदगी शायद इसी संतुलन का नाम है, जहाँ हम अपनी पहचान और अपने रिश्तों, दोनों को साथ लेकर चल सकें। अब हमें यह तय करना है कि अगली पीढ़ी को हम कैसी तस्वीर देना चाहते हैं—ऐसी, जहाँ शादी डर और ज़िम्मेदारी बोझ लगे, या ऐसी, जहाँ शादी साझेदारी हो, ज़िम्मेदारी अपनापन हो और परिवार वह जगह हो जहाँ इंसान ख़ुद को खोता नहीं, बल्कि और बेहतर बनता है। ■■

(साभार, आभा मासिक ई-पत्रिका)

(An ISO 22000:2005 Certified Company)

OCEANS SECRET

INDIA'S LEADING
CANNED FOOD BRAND

• TUNA
• SARDINES
• MACKEREL



www.oceanssecret.in | info@seahath.com | Follow Us: oceanssecret | SHOP ONLINE @ amazon

SEAHATH CANNING CO. Plot - 8, Margao Industrial Estate, Curtorim, GOA, INDIA - 403 709 CUSTOMER CARE : 0832-2860412

विशेष आयोजन

इस्लाम में बच्चों की तरबियत

हज़रत लुक़मान की नसीहतों से हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) तक

❖डॉ. मुहम्मद इक़बाल सिद्दीक़ी

आस्था से चरित्र तक—बच्चे के सम्पूर्ण व्यक्तित्व-निर्माण की इस्लामी दृष्टि

किसी समाज के भविष्य को जानना हो तो उसके बच्चों की स्थिति देखनी चाहिए। आज के बच्चे कल उसके विचार, संस्कृति, नैतिकता और नेतृत्व को आकार देंगे। इसलिए उनकी परवरिश केवल माता-पिता की निजी ज़िम्मेदारी नहीं, बल्कि पूरे समाज के भविष्य से जुड़ा प्रश्न है।

आज बच्चों की परवरिश का उद्देश्य प्रायः अच्छी शिक्षा, अच्छे अंक और आर्थिक सफलता तक सीमित हो गया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि ये उपलब्धियाँ महत्त्वपूर्ण हैं, लेकिन क्या सफल होना ही अच्छा इंसान होना है? क्या हम अपने बच्चों को केवल सफल व्यक्ति बनाना चाहते हैं या ऐसा इंसान भी, जो ईमानदार, संवेदनशील और ज़िम्मेदार हो?

इस्लाम तरबियत को इसी व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखता है। उसका उद्देश्य केवल आज्ञाकारी बच्चा बनाना नहीं, बल्कि ऐसा व्यक्तित्व गढ़ना है जिसमें ईमान, विवेक, आत्मानुशासन, नैतिक ज़िम्मेदारी, विनम्रता और दूसरों के प्रति रहमत हो। क़ुरआन में लुक़मान की अपने बेटे को दी गई नसीहतें और हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) का बच्चों के प्रति व्यवहार इस्लामी तरबियत (व्यक्तित्व-निर्माण एवं नैतिक प्रशिक्षण) के इसी व्यापक दर्शन की उत्कृष्ट मिसालें हैं।

हज़रत लुक़मान : एक पिता की नसीहतों में सम्पूर्ण तरबियती दर्शन

क़ुरआन ने सूरह लुक़मान में लुक़मान और उनके बेटे के बीच हुए संवाद को सुरक्षित रखा है। यह महज़ धार्मिक उपदेशों का संग्रह नहीं, बल्कि बच्चे के व्यक्तित्व-निर्माण का एक क्रमबद्ध पाठ है। इसकी शुरुआत तौहीद अर्थात् एकेश्वरवाद से होती है।

"ऐ मेरे प्यारे बेटे! अल्लाह के साथ किसी को साझी न ठहराना।" (क़ुरआन, 31:13)

ध्यान देने योग्य बात है कि लुक़मान अपने बेटे को "या बुनय्य"—"ऐ मेरे प्यारे बेटे"—कहकर सम्बोधित करते हैं। नसीहत का पहला शब्द ही प्रेम और निकटता का है। यह संकेत करता है कि तरबियत का आधार केवल आदेश और कठोरता नहीं, बल्कि स्नेहपूर्ण सम्बन्ध और संवाद भी है।

तौहीद इस तरबियती दर्शन की पहली मंज़िल है। बच्चे के भीतर यह चेतना पैदा करना कि उसका जीवन उद्देश्यहीन नहीं और वह अपने कर्मों के लिए अल्लाह के सामने जवाबदेह है, उसे आन्तरिक नैतिकता की ओर ले जाता है। बाहरी निगरानी के अभाव में भी सही रास्ते पर टिके रहने का आधार यही जवाबदेही है।

इसके बाद क़ुरआन माता-पिता के अधिकारों का उल्लेख करता है। (31:14) इस प्रकार बच्चे को केवल अपने अधिकारों का ज्ञान नहीं कराया जाता, बल्कि ज़िम्मेदारियों का बोध भी कराया जाता है। इस्लामी तरबियत अधिकार और कर्तव्य के बीच संतुलन स्थापित करती है।

लुक़मान अपने बेटे को समझाते हैं कि राई के दाने के बराबर कोई कर्म भी अल्लाह से छिपा नहीं रह सकता, चाहे वह किसी चट्टान के भीतर या आकाशों और धरती में हो। (31:16)

इस शिक्षा का गहरा नैतिक महत्व है। वास्तविक चरित्र तब विकसित होता है जब बच्चा अकेले में भी सही काम करने को अपना कर्तव्य समझे। इस्लामी तरबियत बाहरी नियंत्रण से आगे बढ़कर आन्तरिक नैतिक चेतना पैदा करना चाहती है।

इबादत से सामाजिक ज़िम्मेदारी तक

लुक़मान की नसीहतों में इसके बाद नमाज़ का उल्लेख आता है :

"ऐ मेरे बेटे! नमाज़ क़ायम करो।" (क़ुरआन, 31:17)

नमाज़ केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं; वह नियमितता, आत्मानुशासन और अपने रब से सम्बन्ध का अभ्यास भी है। लेकिन तरबियत केवल व्यक्तिगत इबादत तक सीमित नहीं रहती। लुक़मान कहते हैं :

"नेकी का हुक्म दो और बुराई से रोको।"

अर्थात् बच्चा केवल अपने सुधार तक सीमित न रहे, बल्कि उसमें समाज के प्रति ज़िम्मेदारी और नैतिक साहस भी पैदा हो। इसके साथ ही उसे कठिनाइयों पर धैर्य रखने की शिक्षा दी जाती है :

"और जो कुछ तुम्हें पहुँचे, उस पर धैर्य रखो।"

(क़ुरआन, 31:17)

आज बच्चों को हर असुविधा से बचाने की कोशिश की जाती है, लेकिन जीवन में असफलता, निराशा और कठिनाइयां भी आती हैं। अच्छी तरबियत का अर्थ रास्ते के हर पत्थर को हटा देना नहीं, बल्कि बच्चे को उनके बीच रास्ता बनाना सिखाना भी है।

चरित्र की तरबियत : व्यवहार भी ईमान का हिस्सा है

लुक़मान की नसीहतों का अगला चरण बच्चे के सामाजिक व्यवहार से सम्बन्धित है। वे अहंकार से बचने की शिक्षा देते हैं :

"लोगों से मुँह फेरकर मत चलो।" (क़ुरआन, 31:18)

फिर कहते हैं :

"अपनी चाल में संयम रखो।"

और :

"अपनी आवाज़ धीमी रखो।" (क़ुरआन, 31:19)

इन आयतों में तरबियत का एक महत्वपूर्ण पहलू सामने आता है। धार्मिक शिक्षा और चरित्र-निर्माण अलग-अलग विषय नहीं हैं। सही आस्था का प्रभाव व्यक्ति के व्यवहार में दिखाई देना चाहिए। विनम्रता, संयम, शिष्टाचार और दूसरों का सम्मान भी तरबियत का हिस्सा हैं।

इस प्रकार लुक़मान की नसीहतें एक क्रम प्रस्तुत करती हैं—आस्था, जवाबदेही, इबादत, नैतिक ज़िम्मेदारी, धैर्य, विनम्रता और सामाजिक शिष्टाचार। यह बच्चे के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के निर्माण का दर्शन है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) : तरबियत का जीवंत उदाहरण

क़ुरआन ने तरबियत के सिद्धान्त प्रस्तुत किए और हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने अपने आचरण से उन्हें साकार करके दिखाया। बच्चों के प्रति आपका व्यवहार इस बात की मिसाल है कि इस्लामी तरबियत केवल आदेश देने का नाम नहीं, बल्कि प्रेम, रहमत और सम्मान का सम्बन्ध है।

आप (सल्ल.) बच्चों को चूमते और उनसे स्नेह करते थे। एक अवसर पर जब अक़रा बिन हाबिस ने कहा कि वह अपने बच्चों को नहीं चूमते, तो नबी (सल्ल.) ने फ़रमाया कि जो रहम नहीं करता, उस पर रहम नहीं किया जाता।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

यह घटना बताती है कि बच्चों के भावनात्मक विकास को इस्लामी तरबियत में कितना महत्व प्राप्त है। प्रेम और सुरक्षा का अनुभव बच्चे को आत्मविश्वास देता है और उसके लिए मार्गदर्शन स्वीकार करना आसान बनाता है।

हज़रत हसन और हुसैन (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) के साथ नबी (सल्ल.) का व्यवहार भी इसी स्नेह की मिसाल है। हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि नबी (सल्ल.) बच्चों के पास से गुज़रते तो उन्हें सलाम करते थे।

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

इस व्यवहार में एक महत्वपूर्ण सन्देश छिपा है। जब समाज का सम्मानित व्यक्ति बच्चे को भी सम्मान देता है, तो उसे यह एहसास होता है कि उसकी उपस्थिति और व्यक्तित्व महत्वपूर्ण हैं। बच्चों को सम्मान देना उनके आत्म-सम्मान और सामाजिक आत्मविश्वास के निर्माण में सहायक होता है।

अनुशासन : डर से नहीं, विवेक से

हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने लगभग दस वर्षों तक हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) की सेवा की। वे बताते हैं कि आपने उन्हें कभी "उफ़" तक नहीं कहा और न ही किसी काम पर कठोरता से उलाहना दिया (सहीह मुस्लिम)। यह घटना तरबियत की एक महत्वपूर्ण विशेषता दर्शाती है—अपमान के बजाय समझाना, भय के बजाय विश्वास और कठोरता के बजाय धैर्य।

इस्लाम अनुशासन का विरोध नहीं करता, बल्कि उसे बच्चे की उम्र, स्वभाव और समझ के अनुरूप विकसित करने पर बल देता है। उद्देश्य केवल यह नहीं कि बच्चा माता-पिता की बात माने, बल्कि उसमें सही-ग़लत की पहचान और अल्लाह के सामने जवाबदेही का ऐसा एहसास पैदा हो कि वह उनकी अनुपस्थिति में भी सही निर्णय ले सके।

इसमें माता-पिता का अपना आचरण निर्णायक भूमिका निभाता है। बच्चे उपदेशों से अधिक व्यवहार से सीखते हैं।

यदि हम ईमानदारी सिखाएँ, लेकिन स्वयं झूठ बोलें; विनम्रता का पाठ पढ़ाएँ, लेकिन घर में अपमानजनक भाषा इस्तेमाल करें, तो हमारा व्यवहार ही बच्चे के लिए वास्तविक पाठ बन जाएगा।

आज के माता-पिता के लिए संदेश

आज बच्चों की दुनिया में स्मार्टफ़ोन, सोशल मीडिया और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) की भूमिका बढ़ रही है। ऐसे वातावरण में केवल यह कहना पर्याप्त नहीं कि, "यह मत देखो" या "यह मत करो।" बच्चे में इतना विवेक विकसित करना ज़रूरी है कि वह स्वयं पूछ सके—क्या यह सही है? क्या यह मेरे लिए उपयोगी है? कहीं इससे किसी दूसरे को नुक़सान तो नहीं होगा?

यही लुक़मान की नसीहतों का समकालीन महत्व है: बच्चे को केवल बाहरी नियंत्रण में रखने के बजाय सही निर्णय लेने योग्य बनाना।

माता-पिता को बच्चों के अंकों के साथ उनके मन की स्थिति भी समझनी होगी; उनकी पढ़ाई के साथ उनकी मित्रता, उनकी स्क्रीन के साथ उनकी भावनाएँ और उनकी उपलब्धियों के साथ उनके चरित्र पर भी ध्यान देना होगा। धार्मिक तरबियत को भी कुछ धार्मिक क्रियाओं तक सीमित नहीं किया जा सकता। बच्चे को नमाज़ के साथ ईमानदारी और करुणा, रोज़े के साथ आत्म-संयम और तौहीद के साथ इंसानों के प्रति सम्मान सिखाना होगा।

आज्ञाकारी बच्चा नहीं, ज़िम्मेदार इंसान

लुक़मान की नसीहतों और नबी मुहम्मद (सल्ल.) के व्यवहार को एक साथ देखें तो इस्लामी तरबियत की व्यापक तस्वीर सामने आती है। लुक़मान की नसीहतें आस्था, जवाबदेही, इबादत, नैतिक साहस और विनम्रता का मार्ग दिखाती हैं, जबकि नबी (सल्ल.) का आचरण प्रेम, रहमत, सम्मान, संवाद और धैर्य की व्यावहारिक मिसाल प्रस्तुत करता है।

इस्लामी तरबियत का आदर्श वह बच्चा नहीं जो माता-पिता की हर बात चुपचाप मान ले, बल्कि वह इंसान है जिसमें सही और ग़लत की पहचान विकसित हो, जो अपनी समझ से सही चुनाव कर सके, अपनी ज़िम्मेदारियों को समझे और दूसरों के लिए रहमत तथा भलाई का स्रोत बने।

बच्चे हमारे पास सौंपी गई अमानत हैं। उन्हें केवल बड़ा करना हमारा काम नहीं; उन्हें अच्छा इंसान बनाना भी हमारी ज़िम्मेदारी है। ■■

अभिभावकों के लिए कुछ ठोस क़दम

इस्लामी तरबियत को व्यवहार में उतारने के लिए अभिभावक कुछ ठोस क़दम उठा सकते हैं :

- **संवाद के लिए समय निकालें :** प्रतिदिन बच्चों के साथ ऐसा समय बिताएँ जिसमें वे बिना डर या झिझक अपनी बात कह सकें। उनकी बात सुनें और सवाल पूछने को प्रोत्साहित करें।
- **अपने आचरण से सिखाएँ :** सच बोलने, वादे निभाने, दूसरों का सम्मान करने और ग़लती स्वीकार करने की शुरुआत स्वयं करें।
- **प्रेम के साथ अनुशासन सिखाएँ :** स्पष्ट नियम बनाएँ, लेकिन अपमान, धमकी और शारीरिक दण्ड के बजाय समझाने तथा उचित परिणामों के माध्यम से ज़िम्मेदारी विकसित करें।
- **धार्मिक शिक्षा को जीवन से जोड़ें :** नमाज़ और क़ुरआन की शिक्षा के साथ ईमानदारी, करुणा, न्याय, विनम्रता और ज़रूरतमन्दों की सहायता का अभ्यास कराएँ।
- **डिजिटल जीवन में सहभागी बनें :** स्क्रीन के समय और सामग्री के बारे में उम्र के अनुकूल नियम बनाएँ। बच्चों को ऑनलाइन निजता, भ्रामक जानकारी और AI के उत्तरों की जाँच करना सिखाएँ।
- **उपलब्धियों से अधिक व्यक्तित्व को महत्व दें :** अंकों और प्रतियोगिताओं के साथ बच्चे के मानसिक स्वास्थ्य, रुचियों, मित्रताओं और भावनात्मक ज़रूरतों पर भी ध्यान दें।
- **उम्र के अनुसार ज़िम्मेदारियाँ सौंपें :** घर के छोटे काम, समय का प्रबन्धन और उचित निर्णय लेने के अवसर देकर आत्म-निर्भरता विकसित करें।

याद रखें, तरबियत एक दिन का पाठ नहीं, बल्कि प्रतिदिन निभाया जाने वाला सम्बन्ध है। बच्चे को प्रेम, मार्गदर्शन और अपनी ग़लतियों से सीखने का अवसर देकर ही उसमें ऐसा विवेक विकसित किया जा सकता है जो जीवनभर उसका मार्गदर्शन करे।

"तुममें से
कोई तब तक पूर्ण विश्वासी
(मोमिन) नहीं हो सकता, जब
तक वह अपने भाई (या दूसरे इंसान)
के लिए भी वही पसंद न करे जो
ख़ुद के लिए पसंद करता है।"
(हदीस : बुख़ारी)

A Well Wisher

Jamaat Islami Hind

Jabalpur Central (M.P.)

बाल कविता

मैं क्या बनूँ?

❖बिन्ते मुज्तबा मीना

मैं जगमग करता चाँद बनूँ
दिल मेरा मचलता रहता है
पर अम्मी मुझसे कहती हैं
तुम चाँद बने तो क्या हासिल
वह सिर्फ़ चमकता रहता है।
मैं एक महकता फूल बनूँ
दिल मेरा मचलता रहता है
पर अम्मी मुझसे कहती हैं
तुम फूल बने तो क्या हासिल
वह सिर्फ़ महकता रहता है।
बनना है तो बुलबुल क्यों न बनूँ
दिल मेरा मचलता रहता है
पर अम्मी मुझसे कहती हैं
बुलबुल भी बने तो क्या हासिल
वह सिर्फ़ चहकता रहता है।
यह चीज़ बनूँ, वह चीज़ बनूँ
दिल मेरा मचलता रहता है
तब अम्मी मुझसे कहती हैं
इंसान बनो तो बात बने
वह सबसे अच्छा होता है।
वह सबसे बेहतर होता है
वह सबसे बढ़कर होता है
अल्लाह ने उसको हुक्म दिया
वह रब की रिज़ा[1] पर चलता है
वह रब का बन्दा होता है।
ये चाँद, सितारे, फूल और फल
ये बाग़, चमन[2], खेती, जंगल
हर सम्त[3] इशारा कर करके
हर चीज़ दिखाकर कहते हैं
इंसान बनो तो अच्छा है।

.....

कठिन शब्द : 1. आज्ञा, प्रसन्नता, 2. उद्यान, वाटिका, 3. ओर।

व्यंग्य

लेख लिखेंगे एआई से, राइटर कहलाएँगे

• सुफ़ियान अहमद •

पूछा मैंने एक बच्चे से,
"क्या तुम्हें नहीं कोई काम?"

बच्चा बोला —"एआई के चलते
काम हैं सब आसान।।"

"आसानी के चलते फिर तुम
भविष्य में क्या कर पाओगे?"

बच्चा बोला—"इसकी चिंता करके
हम बेकार नहीं पछताएँगे।।"

"गणित के सवाल अगर आएँ,
एआई से हल करवाएँगे।।

इतिहास, भूगोल और विज्ञान भी
उससे ही पढ़ जाएँगे।।"

पूछा मैंने—"फिर तुम ख़ुद से
कुछ कब सीखोगे?"

बोला—"एआई जब साथ है तो,
हम क्यों इतना सोचेंगे?"

मैंने पूछा—"ग़लती होगी तो
कैसे पहचानोगे?"

बच्चा बोला—"एआई है न,
उससे ही पूछवाएँगे।।"

कुछ न कर पाए जीवन में तो
है बड़ा सुलभ एक काम—

लेख लिखेंगे एआई से,
राइटर कहलाएँगे।।

कविता, कहानी, निबंध लिखाकर
हम लेखक बन जाएँगे।। (उपसंपादक 'कान्ति')

"जो ज़मीन वालों पर
दया नहीं करता,
आसमान वाला
(ईश्वर) उस पर दया
नहीं करता।"
(हदीस : तिर्मिज़ी)

A Well Wisher

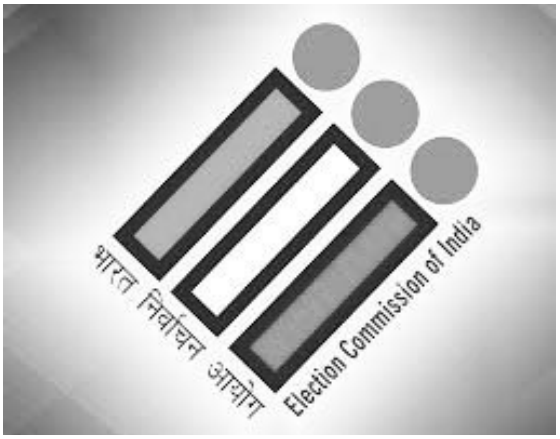
Jamaat Islami Hind
Jarwal Bahraich (U.P.)

विश्व घटनाचक्र

मताधिकार पर मंडराते सवाल

लोकतंत्र की असली ताक़त केवल चुनाव कराने में नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करने में है कि हर पात्र नागरिक को बिना भेदभाव अपने मताधिकार का इस्तेमाल करने का अवसर मिले। मतदाता सूची का पुनरीक्षण आवश्यक प्रक्रिया हो सकती है, लेकिन ऐसी किसी भी प्रक्रिया में पारदर्शिता, निष्पक्षता और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिए। हाल में न्यायमूर्ति उज्ज्वल भुइयां और पूर्व न्यायमूर्ति रोहिंटन फली नरीमन की टिप्पणियाँ इसी व्यापक चिंता की ओर ध्यान दिलाती हैं।

मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार के फ़ैसलों व विशेष गहन पुनरीक्षण(SIR) के विरोध को लेकर देश में जारी विरोध के बीच सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश न्यायमूर्ति उज्जल भुइयां ने बीते दिनों कहा कि लाखों नागरिकों को मतदान के अधिकार से वंचित करने वाली कोई भी प्रक्रिया मूल रूप से मनमानी है और संवैधानिक व्यवस्था के ख़िलाफ़ है। उन्होंने कहा कि मताधिकार संविधान की मूल संरचना का अभिन्न हिस्सा है और इससे वंचित करना अनुच्छेद 14 तथा 326 का उल्लंघन है।



इस बीच, सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायमूर्ति रोहिंटन फली नरीमन ने चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति को मौजूदा सरकार के हाथों में छोड़ने को 'ख़तरे की घंटी' बताते हुए कहा कि इससे मतदान के अधिकार पर गंभीर ख़तरा पैदा हो गया है। उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय से मुख्य चुनाव आयुक्त एवं अन्य चुनाव आयुक्त अधिनियम की वैधता पर जल्द निर्णय लेने की अपील की। उनका कहना था कि संविधान और लोकतंत्र की जान 'मत देने का अधिकार' ख़तरे में है। ऐसा चुनाव आयोग नहीं हो सकता जो इस तरह से काम करे। ■■



उमर ख़ालिद को मिला अंतरराष्ट्रीय सम्मान

एशिया पैसिफ़िक रीजन से उमर ख़ालिद को डबलिन, आयरलैंड में ह्यूमन राइट्स डिफ़ेंडर अवार्ड से सम्मानित किया गया नवाज़ा गया। पिछले दिनों डबलिन में फ्रंट लाइन डिफ़ेंडर्स की ओर से उमर ख़ालिद को दुनिया के उन पाँच मानव अधिकारों के रक्षकों में शामिल किया गया जिन्होंने अपने-अपने देशों में मानव अधिकारों की रक्षा के लिए असाधारण भूमिका निभाई है।

उमर ख़ालिद की ओर से उनके पिता डॉ. क़ासिम रसूल इलियास ने यह पुरस्कार प्राप्त किया। यह एक विचित्र स्थिति है कि जिस व्यक्ति को अपने ही देश में वर्षों से जेल में रखा गया है, उसी के मानव अधिकारों के लिए संघर्ष और सेवाओं को वैश्विक स्तर पर स्वीकार करते हुए सम्मानित किया जा रहा है। ■■

विश्व घटनाचक्र

धर्म और जीवनसाथी चुनने की आज़ादी–इलाहाबाद हाईकोर्ट

आयुष मलिक से जुड़े एक मामले में हाल ही में इलाहाबाद हाईकोर्ट की एक महत्वपूर्ण टिप्पणी सामने आई है। ख़बर के अनुसार, अदालत ने आयुष मलिक को पारिवारिक निगरानी में सीमित रखे जाने से मुक्त करते हुए कहा कि बालिग़ होने के नाते उन्हें अपना धर्म और जीवनसाथी चुनने की स्वतंत्रता है। अदालत का यह रुख़ व्यक्तिगत स्वतंत्रता के संवैधानिक महत्त्व को रेखांकित करता है।



भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में धर्म, आस्था और जीवनसाथी का चुनाव व्यक्ति के निजी अधिकारों से जुड़ा है। संविधान प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आस्था के अनुसार जीवन जीने की स्वतंत्रता देता है। इस स्वतंत्रता का वास्तविक अर्थ तभी है, जब व्यक्ति अपनी इच्छा से फ़ैसले ले सके और केवल परिवार या समाज की असहमति के कारण उसे बंधन में न रखा जाए।

धर्म परिवर्तन और अंतरधार्मिक विवाह को लेकर समाज में अक्सर संदेह, विरोध और तनाव देखने को मिलता है। लेकिन किसी मामले में निर्णय व्यक्ति की स्वतंत्र इच्छा, उपलब्ध तथ्यों और क़ानून के आधार पर होना चाहिए, न कि धार्मिक पहचान या सामाजिक पूर्वाग्रहों के आधार पर। यदि कोई बालिग़ अपनी मर्ज़ी से धर्म अपनाता है या जीवनसाथी चुनता है, तो उसकी इच्छा का सम्मान किया जाना चाहिए। परिवार और समाज की अपनी चिंताएँ हो सकती हैं, लेकिन वे किसी बालिग़ की स्वतंत्रता छीनने का आधार नहीं बन सकतीं। लोकतंत्र की असली कसौटी यही है कि वह व्यक्ति की पसंद और अधिकारों की रक्षा करे, भले ही उसकी पसंद बहुसंख्यक समाज या उसके अपने परिवार को स्वीकार न हो। ■■

पुलिस की ज़्यादती लोकतंत्र का गला घोंटने के समान : प्रो सलीम इंजीनियर

लोकतंत्र की मज़बूती असहमति की आवाज़ सुनने और नागरिकों को अपने अधिकारों का इस्तेमाल करने की स्वतंत्रता देने से तय होती है। दिल्ली में विरोध प्रदर्शनों से निपटने के तरीक़े और विपक्षी नेताओं को हिरासत में लिए जाने पर जमाअत-ए-इस्लामी हिंद के उपाध्यक्ष प्रोफ़ेसर सलीम इंजीनियर की चिंता इसी संदर्भ में महत्त्वपूर्ण है।



उन्होंने पुलिस से पेशेवर रवैया अपनाने और बिना किसी अनुचित राजनीतिक दबाव के संवैधानिक कर्तव्यों का पालन करने की मांग की है। यह मांग लोकतांत्रिक व्यवस्था में पुलिस की भूमिका पर एक बुनियादी सवाल उठाती है। पुलिस का दायित्व क़ानून-व्यवस्था बनाए रखना और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना है, न कि शांतिपूर्ण विरोध की आवाज़ को दबाना। विपक्षी सांसदों और प्रदर्शनकारियों की हिरासत, अनावश्यक प्रतिबंधों तथा बेवजह एफ़आईआर दर्ज किए जाने के आरोपों की निष्पक्ष जाँच होनी चाहिए। यदि पुलिस के दुर्व्यवहार की शिकायतें सामने आती हैं, तो उनकी जाँच और दोषी अधिकारियों की जवाबदेही सुनिश्चित करना भी ज़रूरी है। इसी तरह, विरोध प्रदर्शनों के लिए बड़ी संख्या में सुरक्षाकर्मियों की तैनाती के औचित्य पर भी पारदर्शिता होनी चाहिए। लोकतंत्र में असहमति को दबाने के बजाय उसका जवाब संवाद से दिया जाना चाहिए। सरकार, पुलिस और प्रशासन को समझना होगा कि नागरिक अधिकारों का सम्मान ही लोकतांत्रिक संस्थाओं में जनता का भरोसा मज़बूत करता है। ■■

जेन ज़ी : सपने बड़े हों, जड़ें गहरी रहें

❖अज़का हयात

हम एक ऐसी दुनिया में जी रहे हैं, जिसकी रफ़्तार शायद पिछली किसी भी पीढ़ी से तेज़ है। टेक्नोलॉजी ने हमारे सीखने, काम करने और एक-दूसरे से जुड़ने के तरीक़े बदल दिए हैं। सोशल मीडिया ने हर व्यक्ति को अपनी बात कहने का एक मंच दिया है और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ने संभावनाओं की एक ऐसी दुनिया सामने रख दी है, जिसके बारे में कुछ वर्ष पहले तक कल्पना करना भी मुश्किल था। इस बदलाव के बीच एक पूरी पीढ़ी ऐसी है, जिसने आँख खोलते ही ख़ुद को इंटरनेट, स्मार्टफ़ोन और डिजिटल दुनिया के बीच पाया। यही जेनरेशन ज़ी है।

इस पीढ़ी की मुस्लिम युवती के सामने चुनौती कुछ अलग भी है और कुछ समान भी। वह आधुनिक दुनिया का हिस्सा है, उसके सपने भी हैं, महत्वाकांक्षाएँ भी हैं और अपने लिए एक पहचान बनाने की इच्छा भी। लेकिन इसके साथ उसके पास ईमान, धार्मिक मूल्यों और अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ी हुई एक पहचान भी है। वह एक साथ छात्रा, बेटी, बहन, दोस्त, प्रोफ़ेशनल, उद्यमी, क्रिएटर या वालंटियर हो सकती है। उसकी ज़िंदगी में कई भूमिकाएँ एक-दूसरे के साथ चलती हैं।

कामयाबी केवल उस मक़ाम का नाम नहीं, जहाँ व्यक्ति ख़ुद आगे बढ़ जाए। उसकी एक ख़ूबसूरती तब सामने आती है, जब उसकी तरक़्क़ी से उसके आसपास के लोगों के लिए भी कुछ बेहतर होता है।

ऐसे में उसके सामने एक स्वाभाविक सवाल उठता है; क्या आधुनिक दुनिया में आगे बढ़ने के लिए अपनी पहचान से दूर जाना ज़रूरी है?

शायद इसका जवाब किसी एक को चुनने में नहीं, बल्कि दोनों को साथ लेकर चलने में है। आधुनिकता और ईमान को एक-दूसरे का विरोधी मानने की ज़रूरत नहीं है। सवाल यह है कि आधुनिक दुनिया की सुविधाओं और अवसरों का इस्तेमाल किस सोच और किस मक़सद के साथ किया जाए।

आज की जेन ज़ी मुस्लिमा के सामने सबसे बड़ी चुनौती शायद यही है कि वह अपने आसपास की आवाज़ों के बीच अपनी आवाज़ को पहचान सके।

दुनिया में क्या चल रहा है, यह जानना आज बहुत आसान है। एक क्लिक पर दुनिया भर की ख़बरें, विचार, तस्वीरें और वीडियो सामने आ जाते हैं। लेकिन जानकारी और समझ एक ही चीज़ नहीं हैं। इंटरनेट ने ज्ञान तक पहुँच आसान की है, मगर सही और ग़लत के बीच फ़र्क़ करने की ज़िम्मेदारी अब भी इंसान की ही है।

सोशल मीडिया के ट्रेंड्स बहुत तेज़ी से बदलते हैं। जो चीज़ आज लोकप्रिय है, कल शायद कोई उसे याद भी न रखे। एल्गोरिदम भी लगातार बदलते रहते हैं। ऐसे माहौल में अगर किसी युवा महिला की अपनी योग्यता लाइक्स, फ़ॉलोअर्स और व्यूज़ से तय होने लगे, तो उसका आत्मविश्वास भी उन्हीं आँकड़ों के साथ ऊपर-नीचे होता रहेगा।

यहीं ईमान उसे एक दूसरी तरह की बुनियाद देता है। ऐसी बुनियाद, जो दूसरों की स्वीकृति पर निर्भर नहीं होती। सवाल यह नहीं कि दुनिया मुझसे क्या चाहती है, बल्कि यह कि अल्लाह (ईश्वर) ने मुझे कौन-सी क्षमताएँ दी हैं और मैं उनका इस्तेमाल किस अच्छे मक़सद के लिए कर सकती हूँ।

यह सोच इंसान को भीड़ का हिस्सा बनने के बजाय अपने रास्ते को समझने की ताक़त देती है। डिजिटल दुनिया से पूरी तरह दूर रहना आज न संभव है और न ज़रूरी। सोशल मीडिया सीखने, लोगों से जुड़ने, अपने विचार साझा करने, नई स्किल्स सीखने और रोज़गार या कारोबार के नए रास्ते तलाशने का ज़रिया बन सकता है। कोई युवा महिला ऐसा कंटेंट तैयार कर सकती है, जो लोगों को कुछ सिखाए; अपने प्लेटफ़ॉर्म के ज़रिए किसी अच्छे काम का समर्थन कर सकती है; या डिजिटल माध्यमों का इस्तेमाल अपना कारोबार शुरू

करने के लिए कर सकती है।

लेकिन डिजिटल समझदारी का एक पहलू यह भी है कि यह मालूम हो कि फ़ोन को कब एक तरफ़ रख देना है।

हमारे समय की एक विडंबना यह है कि जुड़ाव के इतने साधन होने के बावजूद अकेलापन भी बढ़ रहा है। स्क्रीन पर मौजूद लोगों की ज़िंदगी अक्सर वास्तविकता से ज़्यादा चमकदार दिखाई देती है। लगातार तुलना इंसान को अपने ही जीवन से असंतुष्ट कर सकती है। इसलिए यह याद रखना ज़रूरी है कि किसी इंसान की क़द्र उसके फ़ॉलोअर्स या कमेंट्स से तय नहीं होती। उसके मूल्य, हमदर्दी, दूसरों के लिए उसके रवैये और अपने ख़ालिक़ के साथ उसके रिश्ते से होती है। इसी तरह शिक्षा भी उसके भविष्य की बुनियाद है। शिक्षा का मक़सद केवल डिग्री हासिल करना या अच्छी सैलरी वाली नौकरी पाना नहीं होना चाहिए। असली तालीम इंसान को सवाल पूछना, चीज़ों को समझना, सही-ग़लत के बीच फ़र्क़ करना और समस्याओं का हल तलाशना सिखाती है।

आज की युवती के सामने अवसरों की कमी नहीं है। वह डॉक्टर बन सकती है, इंजीनियर, राइटर, डिज़ाइनर, लॉयर, साइंटिस्ट या टीचर बन सकती है। वह अपना कारोबार शुरू कर सकती है और टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में भी अपनी जगह बना सकती है। उसके लिए रास्ते पहले की तुलना में कहीं अधिक खुले हुए हैं।

लेकिन करियर का चुनाव केवल इस आधार पर नहीं होना चाहिए कि उससे कितनी आमदनी होगी या समाज उसे कितनी प्रतिष्ठा देगा। असली सवाल यह भी है कि उस काम के ज़रिए वह अपने आसपास की दुनिया में क्या जोड़ रही है।

एक डॉक्टर अपने मरीज़ के साथ हमदर्दी का व्यवहार कर सकती है। एक टीचर किसी बच्चे के भविष्य की दिशा बदल सकती है। एक उद्यमी लोगों के लिए रोज़गार के अवसर पैदा कर सकती है। एक टेक्नोलॉजी विशेषज्ञ ऐसा सॉफ़्टवेयर तैयार कर सकती है, जो किसी वास्तविक समस्या को हल करे। काम के क्षेत्र अलग हो सकते हैं, लेकिन अपने हुनर को दूसरों के काम आने वाला बनाना हर क्षेत्र में एक मक़सद हो सकता है।

कामयाबी केवल उस मक़ाम का नाम नहीं, जहाँ व्यक्ति ख़ुद आगे बढ़ जाए। उसकी एक ख़ूबसूरती तब सामने आती है, जब उसकी तरक़्क़ी से उसके आसपास के लोगों के लिए भी कुछ बेहतर होता है।

लीडरशिप को भी अक्सर इसी तरह समझने की ज़रूरत है। नेतृत्व का मतलब हमेशा कोई बड़ा पद, मंच या बड़ी फ़ॉलोइंग नहीं होता। कई बार नेतृत्व की शुरुआत बहुत छोटे स्तर से होती है; किसी काम की ज़िम्मेदारी उठाने से, किसी की मदद करने से, अपने आसपास की सफ़ाई की पहल करने से या नाइंसाफ़ी के सामने ख़ामोश न रहने से।

और शायद सबसे पहली लीडरशिप ख़ुद अपने ऊपर होती है। अपने समय का इस्तेमाल कैसे करना है? अपनी इच्छाओं को किस तरह नियंत्रित करना है? ग़लती होने पर उसे स्वीकार करना है और सही काम करने के लिए अकेले खड़े होने का साहस रखना है; ये ऐसी बातें हैं, जो किसी पद या टाइटल से नहीं आतीं। आत्म-अनुशासन, ईमानदारी और ज़िम्मेदारी की भावना ही किसी भी नेतृत्व की असली बुनियाद बनती हैं।

आज की युवा पीढी के सामने केवल यह चुनौती नहीं है कि उसे आधुनिक दुनिया में अपनी जगह बनानी है। चुनौती यह भी है कि वह उस दुनिया में अपनी पहचान, अपने मूल्यों और अपने मक़सद को कैसे सुरक्षित रखे।

उसे अपने ईमान को बचाने के लिए दुनिया से कटने की ज़रूरत नहीं और दुनिया में आगे बढ़ने के लिए अपने ईमान से दूर जाने की भी ज़रूरत नहीं। ज़रूरत इस बात की है कि वह शिक्षा को अपने दिमाग़ की ताक़त बनाए, नैतिकता को अपने काम का आधार बनाए और अपने दिल को अपने स्रष्टा से जोड़े रखे।

भविष्य अपने आप नहीं बनता। वह आज के छोटे-छोटे फ़ैसलों से बनता है—हम क्या सीखते हैं, किस चीज़ को महत्व देते हैं, किसके पीछे चलते हैं और अपने हुनर का इस्तेमाल किसके लिए करते हैं।

युवती के सामने इसीलिए एक बड़ा अवसर भी है कि वह ऐसी दुनिया की बना सकती है, जहाँ आधुनिकता का मतलब अपनी जड़ों को छोड़ देना न हो; जहाँ कामयाबी का मतलब केवल पैसा और पद न हो; जहाँ तकनीक इंसान को नियंत्रित करने के बजाय उसके काम आए; और जहाँ ईमान जीवन से अलग कोई चीज़ नहीं, बल्कि जीवन को दिशा देने वाली शक्ति हो। भविष्य केवल उसी का नहीं होता जो सबसे तेज़ दौड़ता है। भविष्य उसका भी होता है, जो यह जानता है कि उसे जाना कहाँ है। ■■

आसान शादी : समाज की ज़रूरत

❖मुहम्मद सलमान

देश में ग़रीबी, बेरोज़गारी और सामाजिक-आर्थिक असमानता की स्थिति चिंताजनक है। ऐसे में दहेज, शादी के कार्यक्रमों में ज़रूरत से ज़्यादा ख़र्च और लड़के या लड़की वालों की बढ़ती अपेक्षाओं के कारण शादी के मामले और मुश्किल होते जा रहे हैं।

प्रगति ग्राम उद्योग एवं समाज कल्याण संस्थान (PGS) के एक शोध के अनुसार, देश में लगभग 60 प्रतिशत परिवार शादियों के लिए क़र्ज़ लेते हैं। इंडिया लेंड्स के अनुसार, आम लोगों द्वारा लिए जाने वाले क़र्ज़ों में वेडिंग लोन सबसे ऊपर है। इन क़र्ज़ों पर ब्याज की दर 10.5 प्रतिशत से लेकर 37 प्रतिशत तक होती है।

प्रगति ग्राम उद्योग एवं समाज कल्याण संस्थान (PGS) के एक शोध के अनुसार, देश में लगभग 60 प्रतिशत परिवार शादियों के लिए क़र्ज़ लेते हैं। इंडिया लेंड्स के अनुसार, आम लोगों द्वारा लिए जाने वाले क़र्ज़ों में वेडिंग लोन सबसे ऊपर है। इन क़र्ज़ों पर ब्याज की दर 10.5 प्रतिशत से लेकर 37 प्रतिशत तक होती है।

शादी के ख़र्च के लिए लिया गया यह क़र्ज़ किस तरह लोगों की ज़िंदगी को बर्बाद कर सकता है, इसकी एक दर्दनाक मिसाल तमिलनाडु के एक परिवार की है। डेक्कन क्रॉनिकल के अनुसार, 2016 में तमिलनाडु के 58 वर्षीय किसान मुथु ने अपनी पत्नी, बेटे और बेटी के साथ आत्महत्या कर ली। वजह यह थी कि वह बेटी की शादी के लिए क़र्ज़ नहीं ले पा रहे थे।

जाँच के अनुसार, सबसे पहले बेटी इंदुमती ने यह कहते हुए आत्महत्या की कि आर्थिक परेशानी उसके कारण पैदा हो रही है। बेटी और बहन की इस दर्दनाक मौत से दुखी होकर माता-पिता और भाई ने भी अपनी जान दे दी।

अमीरों की फ़िज़ूलख़र्ची ग़रीब और मध्यम वर्ग पर सामाजिक दबाव

बहुत से लोग कहते हैं कि अगर कोई अमीर और सक्षम व्यक्ति अपनी हैसियत के अनुसार बहुत धूमधाम से शादी करता है तो इसमें बुराई क्या है? आख़िर वह अपनी ही दौलत ख़र्च कर रहा है और किसी दूसरे को ऐसा करने के लिए मजबूर तो नहीं कर रहा।

ऊपर से यह बात सही लग सकती है, लेकिन समाज को समझने के लिए इतना जानना काफ़ी है कि समाज के प्रभावशाली लोगों का व्यवहार सामाजिक मानदंड बनाने में बड़ी भूमिका निभाता है। जब अमीर लोग शादी-ब्याह का एक ख़ास ढंग अपनाते हैं तो धीरे-धीरे दूसरे लोगों पर भी उसी तरह शादी करने का दबाव बनने लगता है।

लोग चाहते हैं कि उनकी शादी भी उसी स्तर की दिखाई दे। कई बार यह दबाव इतना बढ़ जाता है कि कम आमदनी वाला व्यक्ति भी अपनी क्षमता से कहीं ज़्यादा ख़र्च करने के लिए मजबूर हो जाता है।

रिपोर्टों के अनुसार, भारत में वेडिंग इंडस्ट्री का कुल कारोबार लगभग 10 लाख करोड़ रुपये का है और देश में हर साल लगभग एक करोड़ शादियाँ होती हैं। इन शादियों में औसतन 12.5 लाख रुपये ख़र्च किए जाते हैं। द न्यूज़ मिनट की एडिटोरियल रिपोर्टिंग हेड पूजा प्रसन्ना के अनुसार, भारत में लोग शिक्षा की तुलना में शादियों पर औसतन दोगुना ख़र्च करते हैं। देश में सबसे महँगी शादियाँ केरल और दिल्ली में होती हैं।

सामाजिक दबाव किस तरह काम करता है, इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। मुकेश अंबानी ने अपने बेटे की शादी में भले ही हज़ारों करोड़ रुपये ख़र्च किए, लेकिन यह उनकी कुल संपत्ति के एक प्रतिशत से भी कम बताया जाता है। इसलिए इस ख़र्च का उनकी आर्थिक स्थिति पर बहुत बड़ा असर नहीं पड़ेगा।

लेकिन जब इस तरह की भव्य और महँगी शादियाँ समाज में एक आदर्श बनने लगती हैं तो कम संपत्ति वाला व्यक्ति भी अपनी और अपने बच्चों की शादी में अधिक से अधिक ख़र्च करने का दबाव महसूस करता है।

फ्रांसिस ब्लॉक, सोनलदे देसाई और विजेंद्र राव ने शोध के लिए कर्नाटक के 800 ग़रीब परिवारों का सर्वे किया। सर्वे के नतीजे बताते हैं कि वहाँ ये परिवार एक शादी पर अपनी सालाना आमदनी से लगभग छह गुना अधिक ख़र्च करते हैं। इसका एक बड़ा कारण अपनी सामाजिक स्थिति को बेहतर दिखाना और अपनी आर्थिक स्थिति को छिपाए रखना बताया गया।

अब इन आँकड़ों पर थोड़ा ठहरकर सोचिए। एक अमीर व्यक्ति की फ़ुज़ूलख़र्ची से उसकी अपनी आर्थिक स्थिति पर शायद कोई बड़ा असर न पड़े, लेकिन उसकी शादी का दिखावा ग़रीब और मध्यम वर्ग के लोगों पर ऐसा दबाव डाल सकता है, जो उन्हें क़र्ज़ और ग़रीबी की ओर ले जाए।

प्रोफ़ेसर पी. साईनाथ के अनुसार, सरकारी आँकड़ों के आधार पर केवल महाराष्ट्र के छह ज़िलों में एक साल में तीन लाख से अधिक ऐसे परिवारों की पहचान हुई, जहाँ लड़कियों की शादियाँ नहीं हो पा रही थीं। यह आँकड़ा केवल छह ज़िलों का है, जबकि देश में कुल 788 ज़िले हैं।

इससे समस्या की गंभीरता का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। हालाँकि इसके लिए केवल आँकड़ों की ज़रूरत नहीं है। अगर हम अपने आसपास देखें तो हमें ऐसे बहुत से परिवार आसानी से दिखाई दे जाएँगे जो शादी के ख़र्च, दहेज और सामाजिक दबाव जैसी समस्याओं से जूझ रहे हैं।

बहुत से लोग कहते हैं कि अगर कोई अमीर और सक्षम व्यक्ति अपनी हैसियत के अनुसार बहुत धूमधाम से शादी करता है तो इसमें बुराई क्या है? आख़िर वह अपनी ही दौलत ख़र्च कर रहा है और किसी दूसरे को ऐसा करने के लिए मजबूर तो नहीं कर रहा। ऊपर से यह बात सही लग सकती है, लेकिन समाज को समझने के लिए इतना जानना काफ़ी है कि समाज के प्रभावशाली लोगों का व्यवहार सामाजिक मानदंड बनाने में बड़ी भूमिका निभाता है। जब अमीर लोग शादी-ब्याह का एक ख़ास ढंग अपनाते हैं तो धीरे-धीरे दूसरे लोगों पर भी उसी तरह शादी करने का दबाव बनने लगता है।

आसान शादी की अच्छी मिसालों को सामने लाना चाहिए

आसान निकाह की बात हमारे बीच अक्सर होती है। लेकिन फ़ुज़ूलख़र्ची वाली शादियों की चर्चा और आलोचना करने के बजाय हमें ऐसी अच्छी मिसालों को सामने लाने पर अधिक ध्यान देना चाहिए, जिनसे लोग प्रेरणा ले सकें। आसान निकाह के पक्ष में लोगों की सोच बनाने के लिए कुछ ऐसी ही मिसालें आपके सामने रखी जा रही हैं।

हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ अपने समय के बहुत धनी लोगों में शामिल थे। वे एक सफल व्यापारी थे और प्राप्त जानकारी के अनुसार उनकी कुल संपत्ति लगभग 7 अरब डॉलर के आसपास थी। लेकिन जब उन्होंने मदीना में एक अंसारी महिला से निकाह किया तो निकाह बेहद सादगी से हुआ। उन्होंने निकाह से पहले इसकी जानकारी पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) को भी नहीं दी और न ही बहुत से लोगों को बुलाया। इस घटना की एक अहम बात यह है कि बिना किसी बड़ी दावत या सूचना के निकाह कर लेने पर किसी ने हैरानी या नाराज़गी व्यक्त नहीं की।

सहीह बुख़ारी में इस घटना का विवरण इस तरह मिलता है–

"हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ि.) बयान करते हैं कि अब्दुर्रहमान बिन औफ़ (रज़ि.) पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) की सेवा में आए। उन पर ख़ुशबू के निशान थे। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) ने इसके बारे में पूछा। उन्होंने बताया कि मैंने एक अंसारी महिला से शादी की है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) ने पूछा कि उसे कितना मह्र दिया? उन्होंने बताया कि खजूर की गुठली के बराबर सोना दिया है। इस पर पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) ने फ़रमाया कि शादी की दावत करो, चाहे एक बकरी ही क्यों न हो।"

क्या ही अच्छा हो कि आज जब लोग अनंत अंबानी जैसी शादियों को एक मॉडल की तरह देखते हैं और उनसे प्रभावित होते हैं, तब हम उनके सामने हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ (रज़ि.) की शादी की मिसाल भी रखें।

जब लोग बड़ी शादियों में दुनिया भर से आने वाले बड़े नामों की चर्चा कर रहे हों, तब हम उन्हें यह बताएँ कि एक सहाबी ने अपने निकाह में बड़ी भीड़ या विशेष आयोजन को ज़रूरी नहीं समझा। जब लोग शादी में होने वाले भारी ख़र्च से प्रभावित हो रहे हों, तब हम उन्हें हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ (रज़ि.) के उस जीवन की मिसाल बताएँ जिसमें उनकी दौलत का इस्तेमाल मानवता की भलाई, विकास और इंसाफ़ के लिए हुआ।

इस तरह समाज के सामने अमीरी और शादी के दो अलग-अलग मॉडल रखे जा सकते हैं और लोगों को यह सोचने का अवसर दिया जा सकता है कि वे किस तरह की शादी को सामाजिक आदर्श बनाना चाहते हैं।

कुछ लोग कह सकते हैं कि यह बहुत अलग दौर की मिसाल है। यह एक सहाबी की मिसाल है। आज के दौर में, ख़ासकर अमीर लोग, इस तरह सादगी से शादी नहीं करते। अगर आपको भी ऐसा लगता है तो नीचे दी गई मिसालों पर ध्यान दीजिए–

अच्छे उदाहरण और लगातार किए जाने वाले अच्छे प्रयास समाज की सोच बदल सकते हैं। जिस दिन ऐसा होगा, उस दिन जिन भव्य और फ़ुज़ूलख़र्ची वाली शादियों से आज लोग प्रभावित होते हैं, हो सकता है कल उन्हें देखकर उन्हें असहजता महसूस हो। इसके बजाय आसान शादी समाज में एक सामान्य और सम्मानित परंपरा बन सकती है।

मेटा के संस्थापक मार्क ज़ुकरबर्ग और प्रिसिला चान ने 2012 में अपने घर के पीछे के हिस्से में एक छोटा-सा आयोजन किया। इसमें 100 से कम दोस्त और परिवार के लोग शामिल हुए। मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, वहाँ स्थानीय रेस्टोरेंट का मैक्सिकन खाना, सुशी और स्थानीय रूप से तैयार की गई चॉकलेट पेस्ट्री परोसी गईं।

वॉरेन बफ़ेट, जो दुनिया के सबसे अमीर लोगों में शामिल रहे हैं, ने अपनी पत्नी सूज़न बफ़ेट के निधन के बाद 2006 में एस्ट्रिड मेंक्स से शादी की। शादी उनकी बेटी सूज़ी के घर पर कुछ गिने-चुने लोगों की मौजूदगी में हुई। मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, शादी के बाद डिनर पार्टी पास के एक सी-फ़ूड रेस्टोरेंट में हुई।

एप्पल के संस्थापक स्टीव जॉब्स ने 8 मार्च 1991 को लॉरेन पॉवेल से योसेमाइट नेशनल पार्क के अहवाहनी होटल में शादी की। यह बौद्ध भिक्षु कोबुन चिनो ओटोगावा की अगुवाई में हुई एक छोटा और सादा आयोजन था।

अज़ीम प्रेमजी के बेटे रशाद प्रेमजी की वर्ष 2015 में शादी हुई। मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, इसमें लगभग 150 मेहमान शामिल हुए। यह कार्यक्रम बेंगलुरु के एक होटल में हुआ और परिवार ने सजावट तथा समारोह में सादगी रखी।

विप्रो के चेयरमैन अज़ीम प्रेमजी ने वर्ष 1966 में बेहद सादगी से शादी की। मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, उनकी शादी में केवल परिवार के लोग और कुछ क़रीबी दोस्त शामिल हुए। हमने यहाँ कुछ नामी लोगों की शादियों की मिसालें सामने रखी हैं। इनसे सीख लेने के साथ-साथ हमें पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) के साथियों की शादियों और अपने आसपास होने वाली आसान शादियों की मिसालें भी समय-समय पर समाज के सामने लानी चाहिए।

विभिन्न संस्थाओं और संगठनों की ओर से आसान सामूहिक निकाह के कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। हमें ऐसे कार्यक्रमों को अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाना चाहिए और उन्हें सार्वजनिक चर्चा का विषय बनाना चाहिए।

हमें अपनी और अपने परिवार की शादियों को भी अधिक से अधिक सादा और आसान बनाने की कोशिश करनी चाहिए। इस तरह हम आसान निकाह के पक्ष में अपने अमल से एक उदाहरण पेश कर सकते हैं। इससे फ़ुज़ूलख़र्ची से मुक्त और आसान शादी धीरे-धीरे समाज में सामान्य परंपरा बन सकती है।

याद रखें, अच्छे उदाहरण और लगातार किए जाने वाले अच्छे प्रयास समाज की सोच बदल सकते हैं। जिस दिन ऐसा होगा, उस दिन जिन भव्य और फ़ुज़ूलख़र्ची वाली शादियों से आज लोग प्रभावित होते हैं, हो सकता है कल उन्हें देखकर उन्हें असहजता महसूस हो। इसके बजाय आसान शादी समाज में एक सामान्य और सम्मानित परंपरा बन सकती है। ■■

"वे तुम्हारे भाई हैं
जिन्हें अल्लाह ने तुम्हारे
अधीन किया हैं... उन पर
ऐसा काम का बोझ न डालो जो
उनकी क्षमता से बाहर हो, और
यदि तुम ऐसा कोई भारी काम उन्हें
देते हो, तो ख़ुद भी (काम में)
उनकी मदद करो।"
(हदीस : बुख़ारी)

A Well Wisher

Jamaat Islami Hind
Radhana, Meerut
(U.P.)

नौकरी की तलाश में गुज़रता युवा जीवन

❖तबस्सुम शेख़, पुसद

आज हमारे सामने एक ऐसा सवाल खड़ा है जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता—हमारे युवा बेरोज़गार क्यों हैं और इसके लिए ज़िम्मेदार कौन है? जिस उम्र में युवाओं के हाथों में हुनर होना चाहिए, आँखों में सपने होने चाहिए और क़दम अपने भविष्य की ओर बढ़ रहे होने चाहिए, उसी उम्र में बहुत से युवा नौकरी की तलाश में भटक रहे हैं। किसी के हाथ में डिग्री है, किसी के पास प्रतिभा है और किसी के अंदर मेहनत करने का जज़्बा है, लेकिन रोज़गार का उचित अवसर नहीं है।

बेरोज़गारी केवल कमाई का साधन न होने की समस्या नहीं है। इसका असर युवा के आत्मविश्वास, परिवार की आर्थिक स्थिति और समाज के वातावरण पर भी पड़ता है। जब एक युवा बार-बार नौकरी के लिए कोशिश करता है और हर बार निराशा हाथ लगती है, तो उसके अंदर यह सवाल पैदा होने लगता है कि आख़िर उसकी मेहनत का परिणाम कब मिलेगा?

बेरोज़गारी का दर्द केवल उस युवा को ही महसूस नहीं होता। उसके माता-पिता भी उसकी चिंता में परेशान रहते हैं। उन्होंने अपने बच्चे की पढ़ाई के लिए वर्षों तक मेहनत की होती है और अब वे चाहते हैं कि उनका बच्चा अपने पैरों पर खड़ा हो। लेकिन नौकरी न मिलने के कारण घर का आर्थिक दबाव बढ़ सकता है और परिवार में चिंता का वातावरण पैदा हो सकता है।

सरकार की ज़िम्मेदारी है कि युवाओं के लिए रोज़गार के पर्याप्त अवसर पैदा करे। शिक्षा को केवल डिग्री तक सीमित न रखकर उसे कौशल और रोज़गार से जोड़ा जाए। युवाओं के लिए तकनीकी प्रशिक्षण, व्यावसायिक शिक्षा और स्वरोज़गार के अवसर बढ़ाए जाएँ। छोटे कारोबार शुरू करने वाले युवाओं को उचित मार्गदर्शन और सरकारी योजनाओं की जानकारी आसानी से मिले। गाँवों और छोटे शहरों में भी रोज़गार के अवसर पैदा किए जाएँ, ताकि हर युवा को रोज़गार के लिए बड़े शहरों की ओर जाने के लिए मजबूर न होना पड़े।

युवा अवस्था इंसान की ज़िंदगी का वह दौर होता है, जब आँखों में बड़े-बड़े सपने होते हैं। कोई अपने माता-पिता का सहारा बनना चाहता है, कोई अपना घर बनाना चाहता है, कोई अपने परिवार की आर्थिक स्थिति बदलना चाहता है और कोई समाज के लिए कुछ अच्छा करना चाहता है। लेकिन जब यही युवा पढ़ाई पूरी करने के बाद नौकरी की तलाश में वर्षों तक भटकता रहता है, तो उसके सपनों के साथ-साथ उसका क़ीमती समय भी गुज़रता चला जाता है।

एक युवा सुबह उम्मीद लेकर घर से निकलता है। हाथ में प्रमाणपत्र और मन में विश्वास होता है कि शायद आज कोई अवसर मिल जाए। वह आवेदन करता है, परीक्षा देता है, इंटरव्यू देता है और कई बार लंबा इंतज़ार करता है। लेकिन जब बार-बार निराशा हाथ लगती है, तो धीरे-धीरे उसके अंदर सवाल पैदा होने लगते हैं—क्या मेरी पढ़ाई बेकार गई? क्या मेरी मेहनत की कोई क़ीमत नहीं? मेरा भविष्य आख़िर कहाँ है?

बेरोज़गारी का दर्द केवल उस युवा को ही महसूस नहीं होता। उसके माता-पिता भी उसकी चिंता में परेशान रहते हैं। उन्होंने अपने बच्चे की पढ़ाई के लिए वर्षों तक मेहनत की होती है और अब वे चाहते हैं कि उनका बच्चा अपने पैरों पर खड़ा हो। लेकिन नौकरी न मिलने के कारण घर का आर्थिक दबाव बढ़ सकता है और परिवार में चिंता का वातावरण पैदा हो सकता है।

सबसे दुखद स्थिति तब होती है जब समाज बेरोज़गार युवा की परेशानी समझने के बजाय उसे ताने देने लगता है। कोई कहता है, "इतना पढ़कर भी क्या फ़ायदा हुआ?" कोई उसकी तुलना दूसरे युवाओं से करता है। ऐसे शब्द उस युवा

के आत्मविश्वास को और कमज़ोर कर सकते हैं। हमें समझना चाहिए कि नौकरी न मिलना हमेशा आलस्य का प्रमाण नहीं होता। कई युवा पूरी मेहनत करते हैं, लेकिन उन्हें अपनी योग्यता के अनुसार अवसर नहीं मिल पाता।

बेरोज़गारी का एक और सामाजिक असर यह है कि लंबे समय तक ख़ाली रहने पर कुछ युवा अपना समय ग़लत संगत में बिताने लगते हैं। चौराहों पर घंटों बैठना, बेकार की गतिविधियों में समय गुज़ारना, लड़ाई-झगड़े करना, नशे की ओर बढ़ना या दूसरों को परेशान करना जैसी ग़लत आदतें कुछ युवाओं के जीवन में जगह बना सकती हैं। कुछ युवक लड़कियों और महिलाओं के साथ बदतमीज़ी जैसी हरकतें भी कर सकते हैं। लेकिन यह बात स्पष्ट है कि बेरोज़गारी किसी भी ग़लत व्यवहार का बहाना नहीं हो सकती। महिलाओं और हर इंसान का सम्मान करना हर व्यक्ति की ज़िम्मेदारी है।

इसलिए बेरोज़गार युवा को केवल नौकरी का इंतज़ार करते हुए अपना पूरा समय नहीं गँवाना चाहिए। अगर मनचाही नौकरी अभी नहीं मिली है, तो इस समय का इस्तेमाल कोई नया हुनर सीखने में किया जा सकता है। तकनीकी शिक्षा, कंप्यूटर, व्यापार, कारीगरी या किसी अन्य उपयोगी क्षेत्र में कौशल हासिल करके युवा अपने लिए नए रास्ते खोल सकता है।

नबी (सल्ल.) ने फ़रमाया : "तुममें से कोई व्यक्ति अपनी रस्सी लेकर लकड़ियों का गट्ठर अपनी पीठ पर लाए और उसे बेचकर अपनी ज़रूरत पूरी करे, यह उसके लिए लोगों से माँगने से बेहतर है।" (हदीस : बुख़ारी)

ईमानदारी से मेहनत करके कमाना सम्मान की बात है। युवा को केवल बड़ी नौकरी का इंतज़ार नहीं करना चाहिए; वह अपने हुनर और मेहनत से छोटी शुरुआत भी कर सकता है।

आज इस शिक्षा को समझना बहुत ज़रूरी है। युवा केवल सरकारी या बड़ी कंपनी की नौकरी को ही सफलता न समझे। यदि कोई ईमानदारी से छोटा व्यापार करता है, कोई हुनर सीखकर काम करता है या मेहनत से अपनी आजीविका कमाता है, तो वह सम्मान के योग्य है।

नौकरी की तलाश में युवा की ज़िंदगी के कई साल गुज़र सकते हैं, लेकिन उसकी ज़िंदगी वहीं रुक नहीं जाती। हर दिन कुछ नया सीखने, ख़ुद को बेहतर बनाने और आगे बढ़ने का अवसर हो सकता है। युवा को केवल नौकरी की तलाश में नहीं, अपने भविष्य की तलाश में होना चाहिए।

सरकार अवसर दे, परिवार हौसला दे, समाज सम्मान दे और युवा मेहनत से अपना रास्ता बनाए तो बेरोज़गारी की कठिन परिस्थिति भी एक नई शुरुआत बन सकती है।

आज ज़रूरत है कि हम बेरोज़गार युवाओं से यह न पूछें कि "अभी तक नौकरी क्यों नहीं मिली?" बल्कि यह पूछें कि "तुम्हारे सपने क्या हैं और हम उन्हें पूरा करने में तुम्हारी मदद कैसे कर सकते हैं?" एक युवा का समय केवल उसका अपना नहीं होता। उसमें एक परिवार की उम्मीद, एक समाज का भविष्य और देश की ताक़त छिपी होती है। ■■

लघुकथा

बड़ा आदमी

❖मदीहा अहमद क़ादरी

स्कूल के पहले दिन 9 नंबर ने 8 को थप्पड़ मार दिया। जब 8 ने पूछा कि उसने ऐसा क्यों किया, तो 9 ने कहा, "मैं तुमसे बड़ा हूँ, इसलिए मार सकता हूँ।" यह देखकर पूरी कक्षा में थप्पड़ों की होड़ शुरू हो गई—8 ने 7 को मारा, 7 ने 6 को मारा, और इसी तरह क्रम आगे बढ़ता गया।

जब 2 ने 1 को थप्पड़ मारा, तो बेचारा शून्य (0) डर के मारे कोने में दुबक कर बैठ गया क्योंकि उसे लगा कि अब उसकी बारी है।

लेकिन 1 उसके पास गया और बोला, "डरो मत, मैं तुम्हें नहीं मारूँगा।" यह कहकर 1 जाकर 0 के बग़ल में खड़ा हो गया, जिससे 0 की क़ीमत बढ़कर 10 हो गई।

जब शून्य (0) ने हैरान होकर पूछा कि सब तो अपने से छोटों पर रोब जमा रहे थे, आपने मुझे बड़ा क्यों बना दिया? तब 1 ने उत्तर दिया:— "बड़ा वह नहीं होता जो ख़ुद को बड़ा माने, बल्कि असल में बड़ा वह होता है जो दूसरों को बड़ा बना दे।"

सच्चा बड़प्पन और महानता दूसरों को नीचा दिखाने या उन पर अधिकार जताने में नहीं, बल्कि कमज़ोरों का साथ देकर उन्हें आगे बढ़ाने और सम्मान देने में निहित होती है। ■■

एकेश्वरवाद : एक व्यावहारिक और तार्किक अध्ययन

❖सुफ़ियान अहमद

इतिहास के पन्नों को पलटकर देखें तो ज्ञात होता है कि सदियों से 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) दार्शनिकों, विचारकों और विद्वानों की बहसों का केंद्र-बिंदु बना रहा। ईश्वर का वजूद कैसा है? उसकी सिफ़ात (गुण) क्या हैं? ब्रह्मांड और ईश्वर का संबंध क्या है?—इन सवालों पर हज़ारों किताबें लिखी गईं और शास्त्रार्थ किए गए। लेकिन क्या इस वैचारिक बहस से आम इंसान के रोज़मर्रा के जीवन में कोई वास्तविक बदलाव आया?

इस्लामिक विचार-परंपरा में 'तौहीद' को बुनियादी अक़ीदा (ईमान/विश्वास) माना गया है। हालाँकि, समय के साथ यह अवधारणा अक्सर दार्शनिक बहसों, अकादमिक परिचर्चाओं और शाब्दिक तर्कों तक सीमित होकर रह गई। अतः तौहीद को केवल एक बौद्धिक या किताबी विषय के रूप में देखने के बजाय इसके व्यावहारिक, मनोवैज्ञानिक और जीवन-परिवर्तनकारी पक्षों को समझना भी ज़रूरी है। यह लेख जमाअत-ए-इस्लामी हिन्द के उपाध्यक्ष एस. अमीनुल हसन द्वारा दिए गए एक विशेष ख़ुतबे (शुक्रवार के संबोधन) “तौहीद, जो ज़िन्दगी बदल दे” "Tawheed That Changes Your Life" पर आधारित है। लेख ख़ुतबे में प्रस्तुत प्रमुख तथ्यों और तर्कों के आधार पर तैयार किया गया है।

सैद्धांतिक शास्त्रार्थ से व्यावहारिक जीवन की ओर

सच्चाई यह है कि जब कोई विचार केवल किताबों और अकादमिक सभागारों तक सीमित रह जाता है, तो वह अपनी असली रूह (आत्मा) खो देता है। तौहीद का असली मक़सद किसी दार्शनिक बहस को जीतना या किसी प्रतिद्वंद्वी को नीचा दिखाना नहीं है, बल्कि यह तो इंसान की अमली ज़िंदगी (व्यावहारिक जीवन) का मार्गदर्शक है। जब एक इंसान यह स्वीकार करता है कि इस पूरी कायनात का मालिक और रचयिता केवल एक ईश्वर है, तो यह केवल एक ज़बानी इक़रार नहीं होता, बल्कि उसके पूरे सोचने के तरीक़े और जीवन-शैली में एक इंक़लाब (क्रांति) का आग़ाज़ होता है।

मानसिक स्वाधीनता और आंतरिक भय से मुक्ति

आज का आधुनिक इंसान अनेक अदृश्य ज़ंजीरों में जकड़ा हुआ है। वह दुनिया के सामने तो आज़ाद दिखता है, लेकिन अंदर ही अंदर भविष्य की चिंताओं, सामाजिक दबावों, शक्तिशाली लोगों के डर और आर्थिक असुरक्षा के बोझ तले दबा हुआ है। व्यावहारिक तौहीद इंसान को सबसे पहले इसी मानसिक ग़ुलामी से आज़ाद करता है। जब इंसान के दिल में यह बात गहराई से बैठ जाती है कि:

लाभ और हानि का अंतिम अधिकार केवल ईश्वर के हाथ में है, इज़्ज़त और ज़िल्लत देने वाला केवल वही एक है और जीवन व मृत्यु पर केवल उसी का नियंत्रण है, तो उसके अंदर से दुनिया का हर डर ख़त्म हो जाता है। वह शक्तिशाली लोगों या प्रतिकूल परिस्थितियों के सामने चापलूसी करने या घुटने टेकने के बजाय आत्मसम्मान के साथ खड़ा होता है।

तौहीद की सहज समझ

सामान्यतः हम यह समझते हैं कि मूर्तियों की पूजा न करना ही तौहीद है, लेकिन वास्तविकता यह नहीं है। इस विचार को गहराई से समझाने के लिए एक उदाहरण लिया जा सकता है : मान लीजिए, एक बादशाह किसी व्यक्ति को अपना ख़ास सेवक नियुक्त करता है, उसे महल में रहने की जगह देता है, उम्दा खाना और शाही पोशाकें देता है। लेकिन वह सेवक बादशाह का खाकर किसी मामूली सिपाही या बाहर के व्यक्ति की हुक्मबरदारी करने लगे और उसका शुक्रिया अदा करे। कोई भी बादशाह ऐसे नौकर की नाफ़रमानी बर्दाश्त नहीं करेगा।

ठीक उसी तरह, जब ईश्वर हमें जीवन, साँसें, स्वास्थ्य और भोजन देता है, लेकिन हम डरते किसी और से हैं, माँगते किसी और से हैं और अपनी वफ़ादारी किसी और को सौंप देते हैं—तो यह ईश्वर की सत्ता के साथ सबसे बड़ी बेवफ़ाई (शिर्क) है।

व्यावहारिक एकेश्वरवाद इंसान को सिखाता है कि अपने भीतर के इन अदृश्य बुतों को कैसे तोड़ा जाए। आज के दौर

में इंसान अपने धन, पद, सामाजिक प्रतिष्ठा और अपनी इच्छाओं को ही अपना सब कुछ मान बैठता है। सच्चा तौहीद इंसान को इस झूठी वफ़ादारी से बचाकर केवल वास्तविक मालिक के प्रति समर्पित होना सिखाता है।

अक्सर लोग सोचते हैं कि तौहीद का मतलब मेहनत न करना और हाथ पर हाथ धरकर बैठ जाना है। इस भ्रम को दो बेहद व्यावहारिक मिसालों से दूर किया जा सकता है :

पहली मिसाल : एक व्यक्ति बीमार पड़ने पर डॉक्टर के पास जाता है और बेहतरीन दवा लेता है। लेकिन उसका विश्वास यह होता है कि 'दवा केवल एक ज़रिया है, शिफ़ा (स्वास्थ्य) देने वाली ज़ात केवल ईश्वर की है।' यदि दवा असर न करे तो वह हताश नहीं होता और आराम मिल जाए तो डॉक्टर को ईश्वर का दर्जा देने के बजाय ईश्वर का धन्यवाद करता है।

दूसरी मिसाल : जब कोई यात्री ट्रेन पकड़ने के लिए स्टेशन के वेटिंग रूम में बैठता है, तो वह वहाँ के सोफ़े या सामान पर अपना हक़ जमाने नहीं बैठता। वह जानता है कि यह उसका स्थायी ठिकाना नहीं है। इसी तरह, तौहीद इंसान को यह समझ देता है कि दुनिया की चीज़ें (धन, घर, पद) स्थायी नहीं हैं, इसलिए वह इनके खो जाने पर टूटता नहीं है।

'तवक्कुल' (ईश्वर पर पूर्ण भरोसा) इंसान को सफलता में अहंकार से और असफलता में निराशा से सुरक्षित रखता है। इंसान को अपनी भविष्य की कठिन परिस्थितियों से निपटने के लिए योजना बनानी चाहिए और परिणाम का भय त्यागकर सारा भरोसा ईश्वर पर छोड़ना चाहिए।

जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में तौहीद का व्यावहारिक प्रभाव

एक सच्चे तौहीद से जुड़े व्यक्ति का जीवन सामान्य लोगों से बिल्कुल अलग और अनुकरणीय होता है, जिसे हम जीवन के अलग-अलग पहलुओं में स्पष्ट रूप से देख सकते हैं।

मानसिक स्तर पर : जहाँ एक साधारण इंसान परिस्थितियों के डर, असुरक्षा और अनिश्चितता के तनाव में जीता है, वहीं तौहीद से जुड़ा व्यक्ति ईश्वर पर गहरे भरोसे के साथ आंतरिक शांति और निडरता का अनुभव करता है।

नैतिक दृष्टिकोण से : जहाँ आम जीवन में दिखावा और सामाजिक प्रशंसा की चाह हावी रहती है, वहीं तौहीद से रूपांतरित जीवन में नीयत की पवित्रता और केवल ईश्वर की प्रसन्नता ही मुख्य मक़सद बन जाती है।

आर्थिक क्षेत्र में : यह सोच धन के संचय, लालच और स्वार्थ को समाप्त कर धन को ईश्वर की अमानत मानने और उसका न्यायपूर्ण उपयोग करने की प्रेरणा देती है।

सामाजिक संबंधों में : तौहीद ऊँच-नीच, जातिगत घमंड और वर्गभेद को मिटाकर सभी मनुष्यों की समानता का बोध कराता है, क्योंकि यह स्वीकार करता है कि हम सभी का रचयिता केवल एक ही है।

निष्कर्ष : अमूर्त विचार से जीवंत जीवन-शैली तक

अक्सर एकेश्वरवाद को केवल दर्शन, बहस या शास्त्रार्थ का विषय बनाकर रख दिया जाता है, जबकि इसका असली मक़सद इंसान के व्यावहारिक जीवन में बदलाव लाना है। एकेश्वरवाद का सही एहसास और समझ इंसान के सोचने के तरीक़े, उसके रवैये, नैतिकता तथा उसके संपूर्ण व्यक्तित्व को बदल देता है। सच्चा एकेश्वरवाद इंसान को डर, लालच और ईश्वर के अलावा किसी भी अन्य शक्ति की बंदगी से आज़ाद करता है और केवल एक ईश्वर पर पूर्ण भरोसा सिखाता है।

एकेश्वरवाद जब तक केवल एक किताबी अवधारणा या दार्शनिक बहस बना रहता है, तब तक वह समाज में कोई बदलाव नहीं ला सकता। लेकिन जैसे ही यह दिल की गहराइयों में उतरता है, इंसान के चरित्र को निखार देता है। एक सच्चा एकेश्वरवादी अपने आचरण, निडरता और करुणा से पूरे समाज के लिए प्रकाशपुंज बन जाता है।

अतः ज़रूरी है कि तौहीद को कोई उलझा हुआ दार्शनिक विषय न बनाकर दैनिक जीवन के सीधे-साधे व्यावहारिक अनुभवों से जोड़ा जाए।

जब इंसान 100 स्थानों पर आवेदन देकर निराश हो जाता है और अचानक किसी 101वीं अनजान जगह से अवसर मिलता है, तो यह ईश्वर की व्यवस्था का ही दृश्य है। बंद रास्ते अचानक खुलना, कोई रुका हुआ काम होना या रिश्ता मिलना। निराश मरीज़ों को स्वास्थ्य लाभ मिलना, अनपेक्षित स्रोतों से रोज़गार या आजीविका की प्राप्ति होना। फ़सलों का उगना, गुठली/दाने का फटना, परिंदों का बिना किसी गोदाम के सुबह भूखे निकलना और शाम को पेट भरकर लौटना। दिन-रात का एक के बाद एक आना-जाना, सूर्य का निकलना और ढलना, समय पर वर्षा होना, लहलहाते खेत और सघन बाग़; ये सभी तौहीद के ही संकेत देते हैं। ■■

बेटी है अनमोल

❖डॉ. फ़रहत हुसैन

समाज में बेटे और बेटी के बीच भेदभाव की मानसिकता पाई जाती है। यह अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है कि कन्या का जन्म आज भी शोक और चिन्ता का विषय बना हुआ है, जिसका चित्रण 1450 वर्ष पूर्व क़ुरआन ने किया गया था–

"जब उनमें से किसी को बेटी के जन्म की शुभ सूचना मिलती है तो उसके चेहरे पर कालिमा छा जाती है।"

(क़ुरआन, 16:58)

अरब में अज्ञानकाल के लोग बेटियों को ज़िन्दा ज़मीन में गाड़ देते थे–

"और जब जीवित गाड़ी गई कन्या से पूछा जाएगा कि उसकी हत्या किस अपराध में की गई।" (क़ुरआन, 81:8-9)

इस्लाम की क्रान्तिकारी शिक्षाओं एवं हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के प्रयासों से लोगों में लड़कियों के प्रति सोच बदल गई और तिरस्कार के स्थान पर उन्हें प्रेम और स्नेह प्राप्त होने लगा।

क़ुरआन में बेटी के जन्म की सूचना को 'बुशरा' कहा गया, जिसका अर्थ है शुभ-सूचना।

सन्तान-वध अपराध घोषित किया गया तथा कन्या-वध अत्यन्त क्रूर और जघन्य अपराध माना गया।

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने फ़रमाया–"जो व्यक्ति दो लड़कियों का पालन-पोषण करे यहाँ तक कि वे जवान हो जाएँ, तो क़ियामत (प्रलय) के दिन मेरा और उनका साथ इस प्रकार होगा (आपने उँगलियों को मिलाकर दिखाया)।" (हदीस : बुख़ारी)

"बेटियाँ माता-पिता के लिए नरक की आड़ बन जाएँगी।" (हदीस : इब्ने-माजा)

"जब किसी के यहाँ लड़की पैदा होती है तो ईश्वर उसके यहाँ फ़रिश्ते भेजता है, जो आकर कहते हैं—ऐ घर वालो, तुम पर शान्ति हो। वे लड़की को अपने परों की छाया में ले लेते हैं और उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहते हैं—'यह अबला है, जो अबला से जन्मी है। जो इस बच्ची की देखभाल और पालन-पोषण करेगा, प्रलय तक ईश्वर की सहायता उसको प्राप्त होती रहेगी।" (हदीस : तबरानी)

"लड़कियों से नफ़रत न करो, वे तो हमदर्द और मूल्यवान हैं।" (हदीस : मुसनद अहमद)

एक व्यक्ति, जो पश्चाताप की आग में जल रहा था, हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के पास आया और बोला, "हम अज्ञानकाल में मूर्तिपूजा करते और औलाद को मार डालते थे। मेरी एक बेटी थी। जब मैं उसे बुलाता तो वह दौड़कर मेरे पास चली आती थी। एक दिन मैंने उसको बुलाया तो वह ख़ुशी-ख़ुशी चली आई और मेरे पीछे-पीछे चल पड़ी। जब मैं एक कुएँ के पास पहुँचा तो मैंने उसे कुएँ में डाल दिया। वह 'अब्बा-अब्बा' कहकर पुकारने लगी। यह उसकी आख़िरी आवाज़ थी।" यह घटना सुनकर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) की आँखों से आँसू जारी हो गए, यहाँ तक कि आपकी मुबारक दाढ़ी भीग गई।

इस प्रकार अज्ञानकाल की कन्या-वध की क्रूरतम प्रथा हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने पूर्ण रूप से समाप्त कर दी और बेटों को बेटियों पर प्राथमिकता देना समाप्त हो गया। हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) और इस्लाम ने औरतों और बेटियों को जो अधिकार दिए और उनके सम्मान को बढ़ाया वह स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है।

आज फिर विज्ञान के सहारे लिंग-परीक्षण कराकर कन्या को संसार में आने से रोका जा रहा है। यह भी उसी प्रकार की क्रूरता है। इसे भी इस्लामी शिक्षाओं के माध्यम से ही समाप्त किया जा सकता है। ■■

कान्ति मासिक के सभी पाठक

कृपया ध्यान दें!

अपना पूरा नाम : .....

पता : .....

पोस्ट ऑफिस : .....

डिस्ट्रिक्ट : .....स्टेट : .....पिन : .....

कांटेक्ट नंबर : .....

नीचे दिए गए व्हाट्सऐप नम्बर पर भेजने की मेहरबानी करें।

धन्यवाद!

व्हाट्सऐप नंबर : 98187 99223

नोट : अपना कांटेक्ट नंबर लिखना न भूलें।

एक अपील, एक ऐलान और तआरुफ़

आपकी ख़ुसूसी तवज्जह का सब से ज़्यादा मुस्तहिक़

40 साल की ख़िदमात

मुस्लिम लड़कियों का यतीमख़ाना गया



कैफ़ियते-क़ियाम : इदारा का तीन यतीम लड़कियों से 21 दिसम्बर 1986 को एक किराया के खपरैल मकान में क़ियाम अमल में आया था, जो कभी साँप, बिच्छू और चिड़ियों का बसेरा था—बक़ौल अल्लामा इक़बाल (रह.) "इश्क़ ने आबाद कर डाले हैं दश्त-ओ-कोहसार"

हिन्दुस्तान की रियासत बिहार, झारखंड, बंगाल, उड़ीसा (ओडीशा) में अपने तर्ज़ की पहली और वाहिद इक़ामती दीनी व असरी उलूम की मशहूर तालीमगाहें (Residential) जो इस्लामी और असरी उलूम का संगम होने की वजह से मशहूर है। • इदारा बुनियाद के दिन से ही सही इस्लामी ख़ुतूत पर यतीम के साथ-साथ ग़रीब और ग़ैर-यतीम तालिबात की तालीमी व तर्बियती ख़िदमात अंजाम दे रहा है। • यहां की तालिबात को मैट्रिक (Matric) पास करने के बाद कॉलेज के अलावा अरबी यूनिवर्सिटी में पहले और दूसरे साल में बाआसानी दाख़िला मिल जाता है। • शोबा-ए-हिफ़्ज़ की तालिबा को भी हिफ़्ज़ के साथ-साथ मैट्रिक (Matric) तक पढ़ाया जाता है। • पांच ज़ुबानों में क़ुरआन और इस्लामियात और बिहार बोर्ड के निसाबे-तालीम के साथ मेयारी तालीम का नज़्म है। • **तालीमी साल** अप्रैल ता मार्च, • इदारा के अहाता (Campus) में ही पर्दे (Purdah) में रहकर नर्सरी (Nursery) से मैट्रिक (Matric) तक की तालीम, होम साइंस, उमोरे-ख़ानादारी, सिलाई-कटाई, मेहंदी व पेंटिंग और कम्प्यूटर की तालीम वग़ैरा दी जाती है। इसके लिए बच्चियों को कहीं आना-जाना नहीं पड़ता। • **तालीमी मराहिल** • इब्तिदाई • सानवी • आला • फ़ासलाती तालीम • शोबा हिफ़्ज़ व नाज़रा **यतीम तालिबात की तादाद** 75 है। **नोट** यतीम तालिबात का सारा ख़र्च, तआम व क़ियाम व रिहाइश वग़ैरा बिल्कुल मुफ़्त (Free) है किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। **बैरूनी तालिबात की तादाद** अपने ख़र्च पर दारुल अक़ामा (Boarding) में रहकर तालीम हासिल करने वाली और दूसरे गांव से पढ़कर जाने वाली लगभग 100 हैं। **किफ़ाला स्कीम (Sponsorship)** के तहत एक यतीम बच्ची का सालाना ख़र्च तीस हज़ार रुपये (Rs. 30,000) है। आप भी एक यतीम बच्ची की किफ़ालत की ज़िम्मेदारी लेकर सवाब में शरीक हों। **असातिज़ा, मुअल्लिमात और दीगर मुलाज़िमीन की तादाद** 33 है। एक माह की तनख़्वाह एक लाख अस्सी हज़ार रुपये (Rs. 1,80,000) से ज़्यादा है। **सालाना ख़र्च** तक़रीबन पैंतालिस लाख रुपये (Rs. 45,00,000)। **ज़रिया आमदनी** मुस्लिम अवाम के चंदे **अपील** आज के माद्दापरस्ताना (Materialistic) और जदीद दौर में लड़कियों के लिए जदीद और मुकम्मल इस्लामी तर्ज़े-तालीम के साथ रिहाइशी (Residential) इदारों की पहले से कहीं ज़्यादा बढ़कर ज़रूरत है। • आप इस आसमान छूती महंगाई को देखते हुए और माहे रमज़ानुल मुबारक वग़ैरह के मुबारक मौक़ा पर इदारे की नन्ही-मुन्नी मासूम यतीम बच्चियों को ऊंचा उठाने के लिए अपने • ज़कात • अतियात • सदक़ात से भरपूर माली मदद करें ताकि वे तालीम और हुनर के मैदान में आगे बढ़ सकें और किसी से पीछे न रहें। • बाक़ी तामीरी व तालीमी मन्सूबों को पूरा करने के लिए रक़म की फ़ौरी ज़रूरत है। • इदारा आपके फ़राख़दिलाना और मुख़लिसाना भरपूर माली तआवुन का मुंतज़िर है। **याद रखें** यह लड़कियों का इदारा है। यहां चंदा वसूल करने वालों की बहुत कमी है। यहां का कोई भी मुहस्सिल कमीशन (उजरत) पर चंदा वसूल नहीं किया करता है।

नोट : इदारा की मुख़्तसर तारीख़ दस्तावेज़ी फ़िल्म (Documentary Film) नज़रे-इनायत (Nazr-e-Enayeth) यू-ट्यूब (You Tube) पर देखें।

चैक व ड्राफ़्ट और कोर बैंकिंग स्लिप पर सिर्फ़ यह लिखें : THE GAYA MUSLIM GIRLS' ORPHANAGAE

बराए राबिता चैक व ड्राफ़्ट और मनीऑर्डर भेजने का पता

Founder & Hon. G. Secretary, THE GAYA MUSLIM GIRLS' ORPHANAGE,
At. : Kolowna, P.o : Cherki-824237, Distt. : Gaya (Bihar) India

Email : thegayamuslimgirlsorphanage@gmail.com, Mobile : 8969435151, Website : www.gmgo.in

Beneficiary Name
THE GAYA MUSLIM GIRLS' ORPHANAGE
Bank A/C No.: 300402010007752 (ज़कात/Zakath)
Bank A/C No.: 300402010009846 (डोनेशन/Donation)
Bank IFSC Code No: UBIN0530042
Bank: UNION BANK OF INDIA
(MAIN BRANCH GAYA)

Scan & Pay

याद रखें : बैंक में रक़म ट्रांसफ़र की तफ़्सील बराए-मेहरबानी स्कैन एंड पै (Scan & Pay) या किसी ज़रिये से रक़म ट्रांसफ़र के बाद स्क्रीन शॉट (Screen Shot) नाम व पता सहित व्हाट्स एप कर दें ताकि रसीद भेजी जा सके।

व्हाट्स एप नम्बर 7367909126 बानी व इजाज़ी जनरल सेक्रेट्री इक़बाल अहमद ख़ां—9934480190

पटना ब्रांच ऑफ़िस : पटना शहर के हमदर्द अपना चैक व ड्राफ़्ट और रक़म देने के लिए इनसे राबिता करें।
जनाब ग़ुलाम मुहम्मद ख़ां (सदर) समनपूरा, पटना, **मोबाइल : 9934943229**
जनाब इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ां, समनपूरा, पटना, **मोबाइल : 9631867066**

कहानी

चूक

❖माइल ख़ैराबादी

मेरे बड़े भाई कानपुर में रहते हैं। भाई साहब को बेल बहुत पसंद है। वे बेल को बहुत शौक़ से खाते हैं और उसके फ़ायदे भी बताते रहते हैं। "अगर बेल मिल जाए तो बेल खाओ और अच्छी तरह से पेट भर कर खाओ। ऊपर से ख़ूब पानी भी पीयो। गर्मी हो तो बेल का शरबत बर्फ़ डालकर पीयो।"

भाई साहब की बातों से आपने समझ लिया होगा कि वे बेल के कितने दीवाने हैं। इसलिए जब मैं रामपुर से कानपुर जाता हूँ तो बेल ले जाता हूं बशर्ते कि बेल का सीज़न हो।

भूमिका समाप्त, अब घटना सुनिए। पिछले साल जब मैं कानपुर जाने लगा तो बेल ले जाने का सोचा। थोक मंडी पहुँचा और एक ढेर ख़रीद लिया। मज़दूर को बुलाया और इशारा किया कि बेलों को बोरी में भर दे और रिक्शे तक पहुँचा दे। मज़दूर अपने काम में लगा, तभी मेरे पास खड़े एक आदमी ने मुझसे कहा : "क्या यह बड़ा बेल बेचिएगा, आठ आने दूंगा?" मैंने हँसते हुए कहा : "मैंने बेल बेचने के लिए नहीं ख़रीदे।" वह चुप हो गया। मैं बेल लेकर घर चला आया। शाम की ट्रेन से रवाना हुआ और दूसरे दिन कानपुर पहुँच गया।

भाई साहब सो रहे थे। मैं पहुँचा तो अचानक मेरा नाम लेकर जाग गए। ऐसा लग रहा था कि वे मेरे आने का सपना देख रहे थे। फिर मुझे देखकर पूछा : "बेल लाए?" मैंने कहा "जी हां" और बेलों की तरफ़ इशारा किया। बस फिर क्या था! भाई साहब ने कहा : "अरे, तुम जाओ और देखो। उसे बुलाओ। यह बेल वहाँ फ़लाँ के घर भेज दो।" एक हलचल मच गई। जितने घरों में बेल भेजने थे, उनके लिए अलग-अलग हिस्से रख दिए गए। दो बड़े बेल भाई साहब ने अपने लिए रख लिए। बाक़ी बेल बच्चों और औरतों को दे दिए गए और कहा : "खाओ, ख़ूब खाओ। खाने के बाद ख़ूब पानी पीना।" फिर मुझसे कहा : "चलो कमरे में चलें"

अपने हिस्से के बेल लेकर भाई साहब उठ खड़े हुए। मैं पीछे-पीछे था। वहाँ पहुँचकर दोनों बेलों को ध्यान से देखा। भैया बोले : "बहुत अच्छे हैं! रंग भी बढ़िया है। कानपुर में तो ऐसे बेल एक रुपये का एक भी नहीं मिलता। रामपुर में कितने के होंगे?"

मैंने जवाब दिया : "दुकान पर बारह आने का मिलेगा, लेकिन मैंने तो मंडी से लिए हैं।"

वैसे मंडी में एक आदमी इसी बेल के आठ आने दे रहा था। मैंने उस बेल की तरफ़ इशारा किया। पीला पीला बेल भाई साहब के हाथ में था, और वह मुस्कुरा रहे थे, तभी बोले: "शायद वह आदमी अपने बच्चों के लिए ख़रीदना चाहता था।"

"जी हाँ, मैंने कहा,

"वह यह भी जानता होगा कि तुम बेल बेचने वाले नहीं हो।"

"ज़रूर जानता होगा"

भाई साहब बोले : "तुमसे एक बड़ी चूक हुई। तुम्हें उसे दे देना चाहिए था और यह कहते हुए देना चाहिए था 'लीजिए, बेल मौजूद है। पैसों की क्या ज़रूरत है? जैसे आपके बच्चे हैं, वैसे ही मेरे भी हैं।'

यह कहते हुए भाई साहब बेल को धीरे-धीरे उछालने लगे और मैं शर्म के मारे पसीने पसीने हो गया।

भाई साहब ने कहा : "तुमने एक बड़ी नेकी का मौक़ा खो दिया।"

जब भाई साहब ने बेल को तोड़ा तो अंदर से लगभग तीन-चौथाई सड़ा हुआ निकला! उन्होंने मुझे दिखाया और मैं दंग रह गया। ■■

(उर्दू कहानी का हिंदी रूपांतरण)

प्रस्तुति: सैयदा असमा

क़ौम के अहले- सर्वत और
अहले - ख़ैर हज़रात से
ख़ुसूसी अपील

यतीमख़ाना इस्लामिया गया

आपके माली ताआवुन का मुंतज़िर है

109 साल की ख़िदमात



तआरुफ़ इदारा की बुनियाद अक्तूबर 1917 में एक उस्ताद और दो यतीम बच्चों से आठ आने (50 पैसे) माहवार किराया की कोठरी में Rs. 30 रुपये की छोटी-सी रक़म से पड़ी थी **तालीमी साल :** अप्रैल ता मार्च **तालीमी मराहिल :** इब्तिदाई, • सानवी, • आला, • शोबा-ए-हिफ़्ज़ व नाज़रा, • इनायत (I.T.I) • पांच जवानों में तालीम • अरबी • उर्दू • फ़ारसी • हिन्दी • अंग्रेज़ी • तादाद ज़ेरे-तालीम तलबा व तालिबात : तक़रीबन 450 **• तादाद कुल यतीम तलबा** 60 • बेरूनी तलबा, जो अपना ख़र्च देकर हॉस्टल में रहते हैं, उसके अलावा हैं। • तादाद तदरीसी व ग़ैर-तदरीसी स्टाफ़ : 28 **सालाना ख़र्च :** चालीस लाख (RS. 40,00,000) रुपये से ज़्यादा। **ज़रिया आमदनी :** मुस्लिम अवाम के चंदे। **ख़र्चे :** यतीम तलबा का सारा ख़र्च (तआम, क़ियाम, रिहाइश वग़ैरा बिल्कुल मुफ़्त [Free]) ये सारा ख़र्च इदारा पूरा करता है। किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। **याद रखें :** (1) यहां का कोई भी मुहस्सिल कमीशन या उजरत पर चंदा वसूल नहीं किया करता है। (2) पांच ज़बानों में क़ुरआन व इस्लामियात के साथ क्लास 1 से मैट्रिक (Matric) तक (जो बिहार बोर्ड से मंज़ूरशुदा है) मेयारी तालीम दी जाती है। • हिफ़्ज़ के साथ-साथ मैट्रिक का नज़्म (3) 108 साल से इदारा यतीम और ग़ैर-यतीम तलबा की इस्लामी माहौल में दीनी व असरी तालीम के साथ तालीमी व तरबियती ख़िदमात अंजाम दे रहा है। (4) इदारा ही के अहाते (Campus) में दो हरे-भरे पार्क के साथ शानदार मस्जिद, तालीमगाह, इक़ामतगाह, मतबख़ और दूसरे शोबे वग़ैरा हैं • इसलिए तलबा को कहीं आना-जाना नहीं पड़ता है। **किफ़ाला स्कीम (Sponsorship)** के तहत एक यतीम तालिब-इल्म का सालाना ख़र्च तीस हज़ार रुपये RS. 30,000 है। आप भी इस कारे-सवाब में शरीक हों। • यहां के तलबा को मैट्रिक (Matric) पास करने के बाद कॉलेज के अलावा अरबी यूनिवर्सिटी में आलिमियत के पहले व दूसरे साल में आसानी से दाख़िला मिल जाता है। (5) यतीमख़ाना से मैट्रिक पास करने वाले यतीम तलबा का दाख़िला यतीमख़ाना के इनायत (I.T.I.) में बिल्कुल मुफ़्त (Free) है। उनसे किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। पहले ही की तरह रहने-सहने और खाने-पीने की सारी सहूलियात दी जाती है। **अपील :** इस माद्दापरस्ताना (Materialistic) और जदीद दौर में दीनी व असरी उलूम के रिहाइशी (Residential) इदारों की पहले से कहीं ज़्यादा ज़रूरत है। • आप आसमान छूती महंगाई में इदारा की भरपूर माली मदद करें। तआवुन की मुख़्तलिफ़ शक्लें हैं जैसे • ज़कात • अतियात • सदकात वग़ैरा और इदारा के बाक़ी तालीमी व तामीरी मन्सूबों के लिए भी रुपये की बहुत ज़रूरत है। इदारा आपसे नन्हे-मुन्ने मासूम यतीम बच्चों को तालीम के साथ-साथ बाहुनर बनाने के लिए और उन्हें ऊंचा उठाने के लिए फ़राख़दिलाना माली तआवुन की अपील करता है।

नोट : इदारा की मुख़्तसर तारीख़ दस्तावेज़ी फ़िल्म (Documentary Film) नज़रे-इनायत (Nazr-e-Enayeth) यू-ट्यूब (You Tube) पर देखें।

चैक व ड्राफ़्ट और कोर बैंकिंग स्लिप पर सिर्फ़ यह लिखें : THE GAYA MUSLIM ORPHANAGAE

बराए राबिता चैक व ड्राफ़्ट और मनीऑर्डर भेजने का पता
Hon. Secretary, THE GAYA MUSLIM ORPHANAGE,
Cherki-824237, Distt. : Gaya (Bihar) India

Mobile : 9801213022, Whatsapp No. : 7258063440

Beneficiary Name
THE GAYA MUSLIM ORPHANAGE
Bank A/C No.: 300402010010581 (ज़कात/Zakat)
Bank A/C No.: 300402010002982 (डोनेशन/Donation)
Bank IFSC Code No: UBIN0530042
Bank: UNION BANK OF INDIA
(MAIN BRANCH GAYA)

Scan & Pay

याद रखें : बैंक में रक़म ट्रांसफ़र की तफ़्सील बराए-मेहरबानी स्कैन एंड पै पर (Scan & Pay) या किसी ज़रिये से रक़म ट्रांसफ़र के बाद स्क्रीन शॉट (Screen Shot) और नाम व पता ऊपर के व्हाट्सऐप नम्बर पर भेज दें ताकि रसीद भेजी जा सके।

इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ान (सदर)
9631867066

डॉक्टर जेड. एच. ख़ान
एज़ाज़ी सेक्रेट्री

E-mail : gmocde@yahoo.com.in
Website : www.gmogaya.in

पटना ब्रांच ऑफ़िस : पटना शहर के हमदर्द अपना चैक व ड्राफ़्ट और रक़म देने के लिए इनसे राबिता क़ायम करें।
जनाब ग़ुलाम मुहम्मद ख़ां (सदर) समनपूरा, पटना, मोबाइल : 9934943229
जनाब इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ां, समनपूरा, पटना, मोबाइल : 9631867066

जानकारी

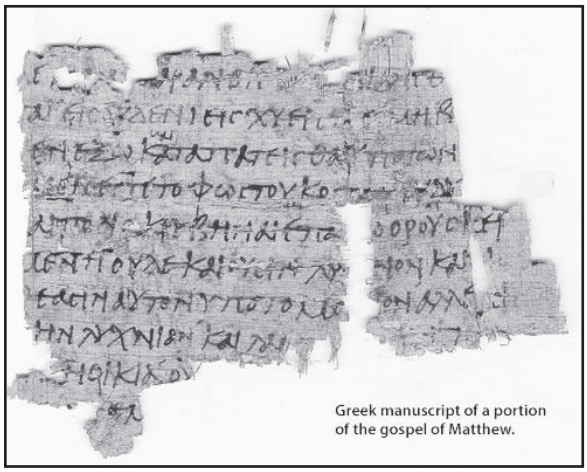
बाइबल में पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) का उल्लेख

आज हमारे सामने मौजूद बाइबल अपने इतिहास में कई तरह के बदलावों और विकास से गुज़र चुकी है। इसके बावजूद, मौजूदा बाइबल में पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) के आने की शुभ सूचना से जुड़े कई प्रमाण अब भी मौजूद हैं।

❖डॉ. वक़ार अनवर

मदीना के यहूदी जब वहाँ के अरबों, औस और ख़ज़रज से किसी विवाद में उलझते थे, तो उन्हें अक्सर यह कहते थे कि एक दिन उनके बीच एक पैग़म्बर भेजा जाएगा। और जब ऐसा होगा, तो वहाँ रहने वाले ग़ैर-यहूदियों का अंजाम 'आद' की क़ौम जैसा होगा, जिसे ईश्वर ने तबाह कर दिया था।

यह औस और ख़ज़रज के लिए एक तरह की ईश्वरीय धमकी थी। वे यह बात यहूदियों से सुनते रहते थे। दूसरे अरबों के विपरीत वे जानते थे कि एक पैग़म्बर आने वाला है। जब मक्का में उनकी मुलाक़ात मुहम्मद (सल्ल.) से हुई, तो उन्होंने उन्हें देखते ही पहचान लिया और ईमान ले आए, क्योंकि वे समझ गए कि यही वह व्यक्ति हैं, जिसके बारे में यहूदी उनसे बातें किया करते थे।


Greek manuscript of a portion of the gospel of Matthew.

वास्तव में, जब वे मक्का में पैग़म्बर (सल्ल.) से मिलकर मदीना लौटे, तो उन्होंने अपने लोगों से कहा, "यही वह व्यक्ति हैं, जिनके नाम से यहूदी हमें डराया करते थे। आओ, हम सबसे पहले उनका साथ दें। हम उनके अनुयायी बनने में सबसे आगे रहें।"

लेकिन विडंबना यह है कि मदीना के अधिकांश यहूदियों ने पैग़म्बर (सल्ल.) का अनुसरण करने से इन्कार कर दिया।

बाइबल में पैग़म्बर (सल्ल.) के बारे में शुभ समाचार

आज हमारे सामने मौजूद बाइबल कई चरणों में हुए बदलावों से गुज़री है। इसके बावजूद वर्तमान बाइबल में पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) के आने की शुभ सूचना से संबंधित कई प्रमाण अब भी मौजूद हैं। ऐसा ही एक उदाहरण निम्नलिखित आयत है–

"मैं उनके भाइयों में से उनके लिए तेरे समान एक पैग़म्बर खड़ा करूँगा और अपने वचन उसके मुँह में डालूँगा। और वह उनसे वही बातें कहेगा, जिनका मैं उसे आदेश दूँगा।"

(ड्यूटेरॉनमी 18:18)

यह भविष्यवाणी मुहम्मद (सल्ल.) पर पूरी तरह लागू होती है। इस्राईलियों को संबोधित करते हुए इसमें कहा गया है कि ईश्वर उनके भाइयों में से एक ऐसा पैग़म्बर भेजेगा, जो मूसा (अलैहि.) के समान होगा। अब यह देखना ज़रूरी है कि कौन-सा पैग़म्बर मूसा (अलैहि.) से सबसे अधिक मिलता-जुलता है। ईसाइयों का दावा है कि यह भविष्यवाणी ईसा मसीह के बारे में है। लेकिन निम्नलिखित बातें पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) और पैग़म्बर मूसा (अलैहि.) के बीच समानता को स्पष्ट करती हैं और बताती हैं कि यह भविष्यवाणी ईसा मसीह के बारे में नहीं है :

• मुहम्मद (सल्ल.) की तरह मूसा (अलैहि.) के भी माता-पिता थे।

• मुहम्मद (सल्ल.) की तरह मूसा (अलैहि.) की भी संतान थी।

ईसा मसीह का जन्म बिना पिता के चमत्कारिक रूप से हुआ, जबकि मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.) दोनों का जन्म सामान्य रूप से माता-पिता से हुआ।

मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.), दोनों को अपनी-अपनी क़ौम ने स्वीकार किया। इसके विपरीत, ईसा मसीह यहूदियों के बीच भेजे गए, लेकिन उनमें से अधिकांश ने उन्हें पैग़म्बर के रूप में स्वीकार नहीं किया।

मुहम्मद (सल्ल.) ने अपनी क़ौम पर शासन किया, उसी तरह मूसा (अलैहि.) ने भी अपनी क़ौम का नेतृत्व और शासन किया। दोनों के पास शासक के रूप में कार्य करने का अधिकार था, जबकि ईसा मसीह ने अपनी क़ौम पर शासन नहीं किया।

यह ध्यान देने योग्य है कि किसी शासक को दूसरों से अलग करने वाली चीज़ वह अधिकार है, जो उसके पास लोगों के संबंध में होता है। इसमें मृत्युदंड देने का अधिकार भी शामिल है। इस दृष्टि से मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.) के बीच ऐसी समानता थी, जो ईसा मसीह के मामले में नहीं थी।

बाइबल में मूसा (अलैहि.) द्वारा एक ऐसे व्यक्ति को पत्थर मारकर मौत की सज़ा देने का उल्लेख मिलता है, जिसने ईश्वर को शाप दिया था :

"और मूसा ने इस्राईलियों से कहा कि वे उस व्यक्ति को छावनी के बाहर ले जाएँ और उसे पत्थरों से मारें। और इस्राईलियों ने वैसा ही किया, जैसा ईश्वर ने मूसा को आदेश दिया था।" (लेविटिकस, 24:23)

इसी तरह मुहम्मद (सल्ल.) ने व्यभिचार करने वाली एक महिला के लिए पत्थर मारकर मौत की सज़ा का आदेश दिया। इसके विपरीत, जब व्यभिचार के आरोप में पकड़ी गई एक महिला का मामला ईसा मसीह के सामने लाया गया, तो उन्होंने कोई सज़ा सुनाने से इन्कार कर दिया। स्पष्ट है कि उन्हें उस समय के राज्य के क़ानून के तहत ऐसी सज़ा देने का अधिकार प्राप्त नहीं था।

बाइबल के अनुसार, यह मामला उनके सामने उनकी परीक्षा लेने के उद्देश्य से लाया गया था, ताकि उन पर राज्य के क़ानून का उल्लंघन करने का आरोप लगाया जा सके। इस घटना का उल्लेख जॉन, 8:5-11 में मिलता है।

ईसा मसीह ने यह भी स्पष्ट किया कि उनका राज्य इस संसार का नहीं है (जॉन, 18:36)। उन्होंने मूसा (अलैहि.) की शरीअत (धर्म-विधान) का विरोध नहीं किया, बल्कि कहा कि वे उसका पालन करने आए हैं। उन्होंने कहा :

"यह न समझो कि मैं व्यवस्था या पैग़म्बरों को समाप्त करने आया हूँ; मैं उन्हें समाप्त करने नहीं, बल्कि पूरा करने आया हूँ। क्योंकि मैं तुमसे सच कहता हूँ कि जब तक आकाश और धरती समाप्त न हो जाएँ, तब तक व्यवस्था से एक बिंदु या एक मात्रा भी समाप्त नहीं होगी, जब तक सब कुछ पूरा न हो जाए।" (मैथ्यू, 5:17-19)

मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.), दोनों ने अपनी-अपनी क़ौम को एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर हिजरत कराई। मुहम्मद (सल्ल.) ने मक्का से मदीना की ओर और मूसा (अलैहि.) ने मिस्र से पवित्र भूमि की ओर अपनी क़ौम का बड़े पैमाने पर नेतृत्व किया। ईसा मसीह के जीवन में ऐसी कोई सामूहिक हिजरत नहीं हुई।

मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.), दोनों ने अपने प्रमुख शत्रुओं को पराजित किया; मुहम्मद (सल्ल.) ने मक्का के प्रभावशाली लोगों को और मूसा (अलैहि.) ने फ़िरऔन को। इसके विपरीत, ईसा मसीह ने किसी शत्रु के विरुद्ध युद्ध नहीं किया और न ही इस सांसारिक अर्थ में कोई युद्ध जीतने का प्रसंग उनके जीवन में मिलता है।

मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.) दोनों की प्राकृतिक मृत्यु हुई और दोनों को धरती में दफ़न किया गया। ईसा मसीह के बारे में ईसाइयों का विश्वास है कि उन्हें सूली दी गई, जबकि मुसलमानों का विश्वास है कि अल्लाह ने उन्हें अपनी ओर उठा लिया। दोनों ही मान्यताओं में ईसा मसीह की मृत्यु सामान्य प्राकृतिक मृत्यु नहीं थी। इसी तरह ईसाई परंपरा में उनके दफ़न और फिर पुनर्जीवित होने की कथा भी मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.) के मामले से बिल्कुल अलग है।

ईसाई स्रोतों के अनुसार ईसा मसीह का पुनर्जीवित होना, या मुसलमानों के विश्वास के अनुसार उनका आसमान की ओर उठा लिया जाना, उनके लिए विशिष्ट है। ऐसी बात मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.) के मामले में नहीं मिलती।

अधिकांश ईसाई ईसा मसीह को ईश्वर मानते हैं, जबकि मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.) के बारे में इस तरह

की ईश्वरत्व की धारणा न मुस्लिम परंपरा में है और न यहूदी परंपरा में। दोनों को ईश्वर के द्वारा पैग़म्बरी के लिए नियुक्त इंसान माना जाता है।

इस प्रकार, जब यह स्पष्ट हो जाता है कि ड्यूटेरॉनमी 18:18 की भविष्यवाणी के संदर्भ में मुहम्मद (सल्ल.) और मूसा (अलैहि.) के बीच समानताएँ हैं, जबकि ईसा मसीह के साथ वे समानताएँ नहीं हैं, तो सवाल उठता है कि मूसा (अलैहि.) के समान और कौन है?

यह भविष्यवाणी किसी इस्राईली या यहूदी पर लागू नहीं होती, क्योंकि इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि वह पैग़म्बर "उनके भाइयों में से" होगा।

यह ऐतिहासिक तथ्य है कि बनी-इस्राईल के भाई केवल बनी-इस्माईल हैं, यानी अरब। यहूदी इसहाक़ की संतान हैं और अरब इस्माईल की संतान हैं। इसलिए इस भविष्यवाणी में जिस पैग़म्बर का उल्लेख है, वह इस्माईल की संतान में से होना चाहिए। मुहम्मद (सल्ल.) इस्माईल की वंश-परंपरा से हैं। इसके अलावा, ड्यूटेरॉनमी 18:18 में कहा गया है कि ईश्वर अपने "वचन उसके मुँह में डालेगा और वह उनसे वही बातें कहेगा, जिनका मैं उसे आदेश दूँगा।" दूसरे शब्दों में, वह पैग़म्बर वही बोलेगा, जिसका उसे आदेश दिया जाएगा। वह अपनी ओर से नहीं बोलेगा, बल्कि वही कहेगा जो ईश्वर चाहेगा।

यही बात पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) के बारे में पूरी तरह सही बैठती है। उन्होंने अपनी इच्छा से नहीं कहा, बल्कि उन पर ईश्वर की ओर से जो कथन उतारे गए, उन्हें क़ुरआन के रूप में संकलित किया गया। क़ुरआन की सभी आयतें ईश्वर के सीधे कथन के रूप में हैं। मुहम्मद (सल्ल.) ने उन आयतों को उसी तरह दोहराया, जिस तरह वे उन पर उतारी गई थीं, उनमें न कोई कमी की और न अपनी ओर से कोई बढ़ोत्तरी की।

आज हमारे सामने मौजूद बाइबल की स्थिति इससे अलग है। ईसाइयों का विश्वास है कि उसके शब्द ईश्वर से प्रेरित हैं। इसके कई लेखक हैं। अलग-अलग 'प्रेरित' व्यक्तियों ने इन्हें लिखा और इसलिए इन्हें ईश्वर के शब्दों का शब्दशः रूप नहीं माना जाता।

'ईश्वर से प्रेरित शब्द' और 'ईश्वर द्वारा उतारे गए शब्द' में स्पष्ट अंतर है। ड्यूटेरॉनमी 18:18 में कहा गया है—"मैं अपने वचन उसके मुँह में डालूँगा।" यह अभिव्यक्ति इस बात की ओर संकेत करती है, जो मुहम्मद (सल्ल.) ने की, अर्थात् उन पर उतारे गए ईश्वर के वचनों को उसी रूप में लोगों तक पहुँचाया। क़ुरआन ने भी स्पष्ट किया है :

"वह अपने मन की इच्छाओं से नहीं बोलता, यह तो एक वह् य (प्रकाशना) है जो उसपर अवतरित की जाती है।"

(क़ुरआन, 53:3-4)

इसलिए इस कथन का अर्थ केवल ईश्वर से प्रेरित शब्दों के बजाय ईश्वर द्वारा उतारे गए शब्दों से होना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। ■■

गीत

ये मुल्क हमारा है ऐलान सुना दीजे
हम हिंदुस्तानी हैं दुनिया को बता दीजे

नफ़रत की सियासत ने बर्बाद किया हमको
नफ़रत के सिवा इसने क्या और दिया हमको
इस गन्दी सियासत को जड़ से ही मिटा दीजे
ये मुल्क हमारा है.....

ये मुल्क है जो अपना इक घर ही का आँगन है
जो मुल्क का दुश्मन है वो अपना भी दुश्मन है
इस मुल्क के दुश्मन को सब मिल के सज़ा दीजे
ये मुल्क हमारा है.....

सब ज़ात धरम वाले रहते हैं यहाँ मिलकर
रहने दें इसी तरह हमें भाई बहिन बनकर
आँखों से तअस्सुब के परदों को हटा दीजे
ये मुल्क हमारा है.....

इस मुल्क की मिटटी में तासीर मुहब्बत है
तासीर मुहब्बत से इस मुल्क की अज़मत है
इस मुल्क की अज़मत को अब और बढ़ा दीजे
ये मुल्क हमारा है.....

पाया है बुज़ुर्गों से अंदाज़े वफ़ादारी
हम कर ही नहीं सकते इस मुल्क से ग़द्दारी
हमको भी वफ़ाओं के बदले में वफ़ा दीजे
ये मुल्क हमारा है.....

–ज़हीर ललितपुरी





Falah-E-Aam Charitable Hospital

Building No-66, Ashiyana Colony,
Hapur Road Meerut, Uttar Pradesh - 250002

युग-परिवर्तनकारी हस्ती के कारनामों का उल्लेख और 'द ग्रेट गैप'

❖डॉ. फ़रहत हुसैन

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) द्वारा संपूर्ण मानवता के लिए किए गए कार्यों का ईमानदारी के साथ अवलोकन करने वाले विद्वानों ने उन्हें विश्व की सबसे प्रभावशाली हस्तियों में स्थान दिया। विडंबना यह है कि पश्चिमी इतिहासकारों ने उस युग की लंबे समय तक अनदेखी की, जिसे इतिहास-लेखन में "The Great Gap" (एक बड़ा ख़ालीपन) या "Eurocentric Bias" (पश्चिमी झुकाव) के रूप में जाना जाता है।

पुराने पश्चिमी इतिहास-लेखन (Historical Narrative) में आमतौर पर इतिहास को एक सीधी रेखा के रूप में प्रस्तुत किया गया — पहले प्राचीन यूनान और रोम की महान सभ्यताएँ आईं। उसके बाद रोम के पतन के बाद यूरोप अंधकार युग (Dark Ages) में चला गया। और फिर सीधे 14वीं-15वीं शताब्दी में पुनर्जागरण (Renaissance) और प्रबोधन का दौर (Enlightenment) आया।

इन अकादमिक संदर्भों से यह स्पष्ट है कि अतीत में पश्चिमी इतिहासकारों द्वारा की गई अनदेखी (The Great Gap) को लेकर उठाए गए प्रश्न का ऐतिहासिक आधार मौजूद है। हालाँकि, हॉजसन, वाट और सईद जैसे विद्वानों के हस्तक्षेप के बाद आधुनिक इतिहास-लेखन में इस्लामी सभ्यता के योगदान पर अधिक गंभीरता से विचार किया गया है।

इस पूरे चक्र में 7वीं शताब्दी से लेकर 11वीं-12वीं शताब्दी के बीच का जो समय था—जिसे 'इस्लामिक गोल्डन एज' (Islamic Golden Age) कहा जाता है—उसे एक तरह से बाईपास कर दिया गया। इस दौरान हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और उनके बाद के इस्लामी साम्राज्यों द्वारा किए गए सामाजिक, क़ानूनी और आर्थिक सुधारों तथा मानवता के लिए किए गए अत्यंत महत्वपूर्ण वैज्ञानिक आविष्कारों को नज़रअंदाज़ किया गया। इस ऐतिहासिक विसंगति को आधुनिक इतिहासकारों ने प्रमाणिकता के साथ उजागर किया है।

मार्शल हॉजसन (Marshall G. S. Hodgson) ने अपनी मील का पत्थर मानी जाने वाली तीन खंडों की पुस्तक 'The Venture of Islam: Conscience and History in a World Civilization' (University of Chicago Press, 1974) में इस बात की कड़ी आलोचना की कि कैसे पश्चिमी इतिहासकारों ने विश्व इतिहास को केवल यूरोप के चश्मे से देखा (Eurocentrism) और सदियों के इस्लामी योगदान को एक 'ब्लैक होल' की तरह छोड़ दिया।

एडवर्ड सईद (Edward Said) की प्रसिद्ध पुस्तक Orientalism (1978) यह स्पष्ट करती है कि कैसे औपनिवेशिक काल (Colonial Era) के दौरान पश्चिमी विद्वानों ने पूर्व (East/Orient) के समाजों और उनके इतिहास को कमतर आँकने के लिए एक विशेष नैरेटिव तैयार किया था।

उस दौर के अरब समाज की तुलना में जो बदलाव किए गए, वे उस समय के लिए बेहद सुधारात्मक थे। इस्लाम के कौन-कौन से सुधारों को नज़रअंदाज़ किया गया, उन्हें संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है–

सामाजिक और महिला अधिकारों से जुड़े सुधार

7वीं शताब्दी के अरब समाज की तुलना में पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) द्वारा लाए गए क़ानून अत्यंत प्रगतिशील और क्रांतिकारी थे, जिन्हें आधुनिक अकादमिक जगत स्वीकार करता है।

संदर्भ : स्कॉटिश इतिहासकार डब्ल्यू. मोंटगोमरी वाट

(W. Montgomery Watt) अपनी पुस्तक Muhammad at Madina (Oxford University Press, 1956) में लिखते हैं कि मुहम्मद साहब के आने से पहले अरब में महिलाओं की कोई क़ानूनी स्थिति नहीं थी और वे संपत्ति की तरह ख़रीदी-बेची जाती थीं। इस्लाम ने उन्हें एक स्वतंत्र क़ानूनी इकाई बनाया।

फ़्रांसीसी इतिहासकार मैक्सिम रोडिनसन (Maxime Rodinson) अपनी पुस्तक Muhammad (1971) में स्पष्ट करते हैं कि इस्लाम ने महिलाओं को संपत्ति का मालिकाना हक़ (Property Rights) और विरासत में हिस्सा दिया, जो उस समय के यूरोप की तुलना में बहुत आगे का क़दम था, जहाँ महिलाओं को संपत्ति रखने का अधिकार कई सदियों बाद मिला।

आर्थिक सुधार और सामाजिक सुरक्षा

इस्लाम ने केवल आध्यात्मिक बातें नहीं कीं, बल्कि एक आर्थिक ढाँचा भी तैयार किया, जो तत्कालीन आर्थिक शोषण के ख़िलाफ़ था।

जॉर्ज मूरिसन (Georges Henri Bousquet) और आधुनिक इस्लामी अर्थशास्त्र के विद्वानों के शोध के अनुसार, 'ज़कात' केवल दान नहीं था, बल्कि यह दुनिया की शुरुआती संस्थागत सामाजिक सुरक्षा प्रणालियों (Institutional Social Welfare Systems) में से एक था, जिसका उद्देश्य राज्य के भीतर धन के केंद्रीकरण को रोकना था।

'Islamic Economic Systems' (1995), अली अब्देल रसूल। यह पुस्तक दर्शाती है कि कैसे सूद पर प्रतिबंध लगाकर ग़रीब व्यापारियों को बंधुआ मज़दूर बनने से बचाया गया था।

क़ानूनी सुधार, अनुबंध और युद्ध के नियम

मानवाधिकारों और अंतरराष्ट्रीय क़ानूनों की जो बुनियाद आज हम देखते हैं, उसकी शुरुआती झलक 7वीं सदी की इस्लामी संधियों में मिलती है।

प्रसिद्ध विद्वान मुहम्मद हमीदुल्लाह की पुस्तक 'The First Written Constitution in the World' (1975) यह बताती है कि पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) द्वारा तैयार किया गया मदीना का चार्टर इतिहास के शुरुआती लिखित संवैधानिक दस्तावेज़ों में से एक था, जिसने बहुसांस्कृतिक और बहुधार्मिक समाज (मुस्लिम, यहूदी और मूर्तिपूजक) को अधिकारों और दायित्वों के एक साझा ढाँचे में रखा।

माजिद ख़द्दूरी की पुस्तक 'War and Peace in the Law of Islam' (Johns Hopkins Press, 1955) में उल्लेख है कि आधुनिक जिनेवा कन्वेंशन से सदियों पहले पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) और प्रथम ख़लीफ़ा अबू-बक्र ने युद्ध के मानवीय नियम निर्धारित किए थे—जैसे ग़ैर-लड़ाकों (महिलाओं, बच्चों और साधुओं), फ़सलों और मवेशियों को नुक़सान न पहुँचाना।

आधुनिक पश्चिमी विद्वानों के बदलते दृष्टिकोण

आज के शीर्ष विश्वविद्यालयों (Harvard, Oxford, Cambridge) में इन सुधारों को इतिहास की एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में पढ़ाया जाता है।

कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के प्रोफ़ेसर तीमोथी विंटर (Timothy Winter/अब्दुल हकीम मुराद) द्वारा संपादित 'The Cambridge Companion to Classical Islamic Theology' इस बात की विस्तृत रूप-रेखा प्रस्तुत करता है कि आधुनिक अकादमिक जगत इस्लामी सभ्यता के क़ानूनी और सामाजिक योगदानों का किस प्रकार अध्ययन कर रहा है।

मुस्लिम वैज्ञानिकों की खोजों और आविष्कारों की अनदेखी

मुस्लिम वैज्ञानिकों द्वारा किए गए विभिन्न आविष्कारों और खोजों को भी नज़रअंदाज़ किया गया या उन खोजों को ऐसे नामों से प्रस्तुत किया गया, जिससे यह स्पष्ट नहीं हो पाता था कि उनका बुनियादी शोध-कार्य मुस्लिम वैज्ञानिकों द्वारा किया गया था। ऐसे शोध-कार्य आगे चलकर यूरोप, बल्कि पूरे विश्व की वैज्ञानिक खोजों का आधार बने।

इन अकादमिक संदर्भों से यह स्पष्ट है कि अतीत में पश्चिमी इतिहासकारों द्वारा की गई अनदेखी (The Great Gap) को लेकर उठाए गए प्रश्न का ऐतिहासिक आधार मौजूद है। हालाँकि, हॉजसन, वाट और सईद जैसे विद्वानों के हस्तक्षेप के बाद आधुनिक इतिहास-लेखन में इस्लामी सभ्यता के योगदान पर अधिक गंभीरता से विचार किया गया है।

यहाँ यह स्पष्ट करना भी ज़रूरी है कि पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) तथा उनके उत्तराधिकारियों ने जो सुधारात्मक और दूरगामी कार्य किए, उनमें क़ुरआन की शिक्षाओं की महत्वपूर्ण भूमिका थी। क़ुरआन के बारे में मुसलमानों का मानना है कि यह मनुष्यों के पालनहार की ओर से दिया गया मार्गदर्शन है। उसके आधार पर जो भी सुधारात्मक कार्य किए गए, उनके परिणाम समाज में स्पष्ट रूप से दिखाई दिए। ■■

अंतिम पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.)

हिजरत और मस्जिदे-क़ुबा का निर्माण

❖मुशर्रफ़ अली

क़ुरैश की दारुन्-नदवा में जब अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की हत्या का प्रस्ताव पारित हो गया तो अल्लाह के आदेश से हज़रत जिबरील ने नबी (सल्ल०) को उसकी सूचना दे दी। नबी को मदीना की ओर हिजरत करने की अनुमति देते हुए उसका निर्धारित समय भी बता दिया और साथ ही यह भी निर्देश दिया कि आज आप अपने बिस्तर पर न सोएं।

इसके बाद अल्लाह के रसूल (सल्ल०) हज़रत अबू-बक्र के घर गये और उन्हें रात में निकलने के लिए तैयार रहने के लिए कहकर अपने घर आ गये। वह 12 सितम्बर 622 ई०, वृहस्पतिवार का दिन था। फिर आपने मक्का के लोगों की अमानतें हज़रत अली के हवाले कीं। (यह बड़ी विडम्बना है कि वे लोग जो आपके ख़ून के प्यासे थे, विश्वास भी उन्हीं पर करते थे और अपना बहुमूल्य सामान उनके पास ही रखना सुरक्षित समझते थे) नबी (सल्ल०) ने अली को बताया कि कौन-सा सामान किसका है और उन्हें निर्देश दिया कि आज की रात वे उनके बिस्तर पर सो जाएं और सुबह लोगों की अमानतें उन्हें लौटाकर मदीना के लिए चल पड़ें। हमारी मुलाक़ात वहीं होगी।

जब रात का अंधेरा छा गया तो क़ुरैश के विभिन्न क़बीलों के ग्यारह सरदार नंगी तलवारें लेकर नबी (सल्ल०) के दरवाज़े के आस-पास बैठ गये कि जब वे सुबह की नमाज़ के लिए निकलें तो उन पर टूट पड़ें। उनकी संसद ने यही तय किया था कि रातभर घर को घेरे रखें और सुबह मुंह अंधेरे ही उनकी हत्या कर दें। अतः वे नबी (सल्ल०) के घर के बाहर जाग कर रात गुज़रने का इंतिज़ार करने लगे।

घर के अन्दर अली नबी (सल्ल०) के बिस्तर पर उनकी ही चादर ओढ़कर सो रहे थे। अली का कहना है कि उस रात उन्हें बहुत ही अच्छी नींद आयी क्योंकि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने उन्हें अगली सुबह करने के लिए कुछ काम सौंपा था, इसलिए उन्हें पूरा विश्वास था कि रात में कोई उनका बाल भी बांका नहीं कर सकता। साथ ही उन्हें सकुशल मदीना पहुंचने का भी विश्वास था, क्योंकि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने वहां मुलाक़ात करने को कहा था और अल्लाह के रसूल की बात कभी ग़लत नहीं हो सकती।

निर्धारित समय पर अल्लाह के रसूल (सल्ल०) अपने घर से निकले और तलवारधारी दुश्मनों के बीच से होते हुए आगे बढ़ते चले गये। कोई भी उनको देख नहीं सका। एक तो इसलिए भी कि अन्दर बाहर घटाटोप अंधेरा था और हाथ को हाथ सुझाई नहीं देता था। यह भी हो सकता है कि समय बीतने के साथ रात ठंडी होने लगी थी और दुश्मनों को ऊंघ आ गयी हो। यह भी है कि किसी ने भी यह अपेक्षा नहीं की थी कि उस समय अल्लाह के रसूल (सल्ल०) घर से बाहर निकल जाएंगे। थोड़ी-थोड़ी देर बाद उनमें से कोई घर में झांक कर देखता था और अंधेरे में उन्हें बिस्तर पर कोई सोया हुआ महसूस हो जाता था।

सुबह जब उन्होंने देखा कि बिस्तर से मुहम्मद के बजाय अली उठ रहे हैं, तो उनके हाथों के तोते उड़ गये। ग़ुस्से और झिल्लाहट में उन्होंने हज़रत अली को ही पकड़ लिया और उन्हें काबा के अन्दर ले जाकर बन्द कर दिया। फिर जैसे ही उन्हें अपनी मूर्खता का एहसास हुआ उन्होंने अली को छोड़ दिया और मुहम्मद (सल्ल०) की तलाश में निकल पड़े।

उधर आधी रात को अल्लाह के रसूल (सल्ल०) अपने घर से निकलकर अबू-बक्र के घर पहुंचे और उन्हें साथ लेकर घर के पिछले दरवाज़े से निकल गये। उनको अनुमान था कि क़ुरैश सुबह होते ही उनकी तलाश में निकल पड़ेंगे, इसलिए उन्होंने मदीना की ओर जाने वाला रास्ता छोड़कर उसके विपरीत दिशा का रास्ता अपनाया। उस रास्ते पर पांच मील दूर जाकर 'सौर' नाम का एक पहाड़ है, दोनों कठिन चढ़ाई चढ़कर उस पहाड़ पर चढ़ गये और एक गुफा में जा छिपे।

वह गुफा आज भी मौजूद है। अबू-बक्र के बेटे अब्दुल्लाह जो उस समय किशोरावस्था में थे गुफा में क़ुरैश की भाग-दौड़ के समाचार पहुंचाते रहते थे। अबू-बक्र का एक

सेवक अंधेरा होते ही बकरियां चराकर लौटता और आप लोग उन बकरियों का दूध पी लेते। इस तरह आप लोग गुफा में तीन दिन रहे।

उधर क़ुरैश दीवाने हो रहे थे। उन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) और अबू-बक्र (रज़ि०) को पकड़ने के लिए हर संभव उपाय कर डाला मक्का से निकलने वाले सारे रास्ते चाहे वे किसी भी दिशा में जाते हों, उन सबकी नाकेबंदी कर दी। यह घोषणा कर दी गयी कि उन्हें जीवित या मृत पकड़ कर लाने वाले को मुंह मांगा इनाम दिया जाएगा। इनाम की लालच में खोजी सवार और प्यादे चारों ओर फैल गये। यहां तक कि कुछ खोजी सौर की गुफ़ा पर भी पहुंच गये। वे इतने निकट थे कि हज़रत अबू-बक्र को उनके पांव दिखाई पड़ रहे थे। उन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से कहा भी कि अगर ये लोग केवल अपनी नज़र नीची कर लें तो हमें देख लेंगे। इसपर आपने कहा कि घबराओ नहीं अल्लाह हमारे साथ है।

चौथे दिन 16 सितम्बर 622 ई० को आप लोग गुफा से निकले। अबू-बक्र ने एक आदमी से बात तय कर ली थी, जो रेगिस्तान के रास्तों से भली-भांति परिचित था। उन्होंने अपनी दोनों ऊंटनियां भी मंगवा लीं। अब तीन लोगों का यह क़ाफ़िला अनजान रास्तों से मदीना के लिए चल पड़ा और लम्बे रेगिस्तानी रास्तों से गुज़रते हुए आप लोग एक हफ़्ते में 23 सितम्बर 622 ई० को मदीना के पास क़ुबा नाम की बस्ती में पहुंचे।

पहली मस्जिद

मदीना से तीन मील पहले क़ुबा नाम की एक बस्ती है। यहां मदीना के बहुत से परिवार बसे हुए थे और वे सब ईमान ला चुके थे। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को देखते ही लोग बस्ती के बाहर निकल आये और ख़ुशी के नारे लगाने लगे। मदीना के लोग भी झुंड-के-झुंड आकर उनसे मिलने लगे। वे यहां चौदह दिनों तक रुके। यहां नबी ने अपने हाथों से एक मस्जिद की बुनियाद डाली और उसके निर्माण में वहां के लोगों के साथ ख़ुद भी मज़दूरों की तरह काम किया। वे भारी-भारी पत्थरों को उठा लेते, जिससे उनका शरीर झुक जाता। यह देखकर कोई आस्थावान दौड़ा हुआ आता और पत्थर उनके हाथों से ले लेता। वे वह पत्थर उसे थमा देते और फिर दूसरा पत्थर उठा लेते।

चौदह दिनों के बाद जुमा के दिन अल्लाह के रसूल (सल्ल०) शहर मदीना की ओर रवाना हुए। रास्ते में नमाज़ का वक़्त हो गया तो आपने जुमा की नमाज़ पढ़ायी और नमाज़ से पहले ख़ुत्बा (अभिभाषण) भी दिया। यह अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की इमामत में सबसे पहली जुमा की नमाज़ थी और सबसे पहला ख़ुत्बा था।

यहां मदीनावासियों ने आपका ज़बरदस्त स्वागत किया। नमाज़ के बाद आप आगे बढ़े। जिस क़बीले से आपकी सवारी गुज़रती लोग आ-आकर आपसे मिलते और अपना घर पेश करते। वे कहते हुज़ूर यह घर, यह माल और यह जान सब आपके लिए है। आप उन्हें दुआएं देते और आगे बढ़ जाते। घरों की महिलाएं छतों पर निकल आयीं और आपके आगमन की ख़ुशी में गीत गाने लगीं। छोटी बच्चियां भी आपके स्वागत में दफ़ बचातीं और गीत गाकर आपको अपना पड़ोसी बनाने की इच्छा जतातीं। जब अबू-अय्यूब अंसारी का घर आया तो आपकी ऊंटनी वहां रुक गयी और बैठ गयी। इस तरह आप अबू-अय्यूब अंसारी के मेहमान हो गये। अबू-अय्यूब का मकान दो मंज़िला था। वे अपने परिवार के साथ ऊपर वाली मंज़िल पर चले गये और नीचे का हिस्सा अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के हवाले कर दिया। वे यहां सात महीने रहे। ■■ (जारी)

अब आप दावत ट्रस्ट के तहत प्रकाशित दावत वीकली न्यूज़ पेपर / कान्ति मासिक पत्रिका / ज़िंदगी-ए-नौ माहनामा मैगज़ीन ट्रैकिंग के साथ निम्न स्पेशल ऑफर (सिर्फ़ 2500 रुपये) में, अपने पते पर हासिल कर सकते हैं।

सम्पर्क करें :

98911 60829
98187 99223

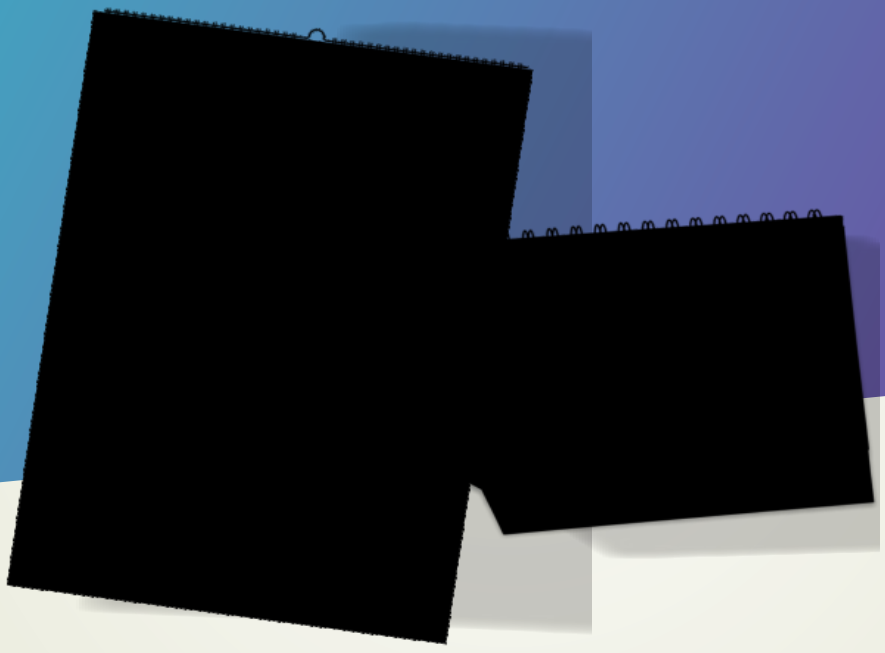
दावत हफ़्त रोज़ा
ज़िंदगी-ए-नौ माहनामा नई दिल्ली
कान्ति मासिक

Offer Price with Tracking facility

Periodical	Annaul Subs	After discount Annaul Subs	Postal Charge	After discount Postal Charge
Dawat Weekly	900	700	800	700
Zindagi e Nau Monthly	500	450	250	150
Kanti Monthly	450	350	250	150
Total	1850 ✗	1500 ✓	1300 ✗	1000
Grand Total	3150 ✗	x		
After Discount	2500 ✓			

2027 कैलेंडर उपलब्ध हैं

- अर्थपूर्ण संदेश, बेहतरीन गुणवत्ता और आकर्षक छपाई
- अधिक संख्या में खरीदने पर विशेष छूट
- अपने या संस्थान के नाम से प्रकाशित करवाने की सुविधा



MMI PUBLISHERS مرکزی مکتبہ اسلامی پبلشرز

D-307, Dawat Nagar, Abul Fazl Enclave, Jamia Nagar, New Delhi-110025

mmipublishers@gmail.com www.mmipublishers.net **7290092403**

Sub Depot: **Hyderabad :** 9491874087 | **Bangalore :** 9036996740 | **Goa :** 9987196549

KANTI Monthly, New Delhi
November 2026
Posted on 20-21 October 2026
Published on 18 October 2026
Posted Delhi RMS Delhi-110006

RNI 53372/91
DL(S)-05/3147/2024-2026
LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
License No. U(SE)-73/2024-26
Total Pages with Cover: 52

WISDOM
GROUP OF INSTITUTIONS, BIDAR.



NEET REPEATERS 2027 BATCH
Classes Started

Congratulations
To Our NEET Toppers 2026


530 Marks
MD JAMAL SIDDIQUE


520 Marks
HURAIN ZAMA
Secured Govt MBBS Seat @ BRIMS BIDAR


498 Marks
HUMA NASHRA
Secured Govt MBBS Seat @ MRMC KALABURGI

& Many More...

SCHOLARSHIP FOR NEET REPEATERS
430+ in NEET 2026?
90% Tuition Scholarship
50% Hostel Scholarship
Scholarships Available For Every Score Range.

100% Students NEET Qualified
20+ Students Expected to Secure Government Free Medical Seats

NEET | JEE | K-CET ACADEMY

SEPARATE
Residential Hostels For Boys & Girls

For Classes 8th–12th & NEET Repeaters



GIRLS CAMPUS
Behind Urdu Hall, Taleem Siddique Shah, BIDAR.


BOYS CAMPUS
Near Basveshwar Circle, Inside Naikaman, BIDAR.

Syed Ali Sir (Admission Incharge)
8951598889

Rajeshree Madam (Academic Incharge)
81518 14686


MOHAMMEDD SALAHUDDIN FARHAN (SECRETARY)
8970588874

MOHAMMED ASIFUDDIN
CHAIRMAN
9448891008

